‡ श्रीः ‡

स्वर्गीय संघी नेमीचन्दजी लुहाड़िया

के स्मरणार्थ

उनकी धर्मपत्नी की ओर से

* सादर भेंट *

॥ ॐ ॥

प्रकाशक के दो शब्द ।

रत्नत्रय धर्म की महिमा अपार है, इसीलिए आचार्यों ने इसको मोक्ष का मूल कारण बताया है। रत्नत्रय धर्म क्या है इसको बतलाने की शक्ति हो तो हम जैसे मन्द बुद्धियों में हो नहीं सकती फिर भी इसके विषय में श्रीमान् पंडित आनन्दीलाल जी शास्त्री ने भूमिका में अच्छा प्रकाश डाला है।

जैन समाज में सौलह कारण, दश लक्षण, रत्नत्रय आदि धर्मों को व्रत का रूप देकर पूर्वा-चार्यों ने व्रत पूजा विधानादि करने का मार्ग दिखलाया है। हमारे बहुत से भाई व बहिनें भादों मास में इन व्रतों को करते हैं और इनकी पूजाऐं भी की जाती हैं।

रत्नत्रय विधान आजतक प्रकाशित नहीं हुआ था इसके लिए मैंने अपने माननीय मित्र पं० आनन्दीलाल जी शास्त्री, (न्याय साहित्य तीर्थ) से अनुरोध किया कि आप इसका संशोधन करें ताकि प्रकाशित कराया जावे। पंडित जो ने अपना अमूल्य समय इस कार्य में लगाकर इसको पूरा किया इसके लिए मैं उनका अभारी रहूँगा। और उनको हार्दिक धन्यवाद है।

जैपुर निवासी स्वर्गीय संघी नेमीचन्दजी लुहाड़िया की धर्म पत्नी ने अपने स्वर्गीय पति देव की स्मृति में इस पुस्तक को प्रकाशित करा कर वितरण करने का श्रेय लिया है इसके लिये मैं ही नहीं बल्कि सारा समाज उनका अभारी रहेगा। आशा है कि भविष्य में भी आप इसी तरह अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करके समाज का उपकार करेंगी।

मैं अपने माननीय मित्र माणकचन्दजी भाँवसा व भाई सूरजमलजी साह को भी धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में मेरी पूरी मदद की है, साथ ही श्रीमान् बाबू कपूरचन्दजी जैन प्रोप्राइटर महावीर प्रेस आगरा वाले भी धन्यवाद के पात्र हैं कि जिन्होंने बहुत थोड़ा समय होते हुए भी हमारे इस कार्य को सुन्दरता के साथ सफल बनाया। यह इन्हीं मित्रों की कृपा का फल है कि जो आज यह पुस्तक आप लोगों की सेवा में उपस्थित हो रही है। मुझे आशा है कि हमारे गुणानुरागी विज्ञ पाठकगण इससे उचित लाभ उठावेंगे।

जैपुर
भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा
वीर नि० सं० २४६४

समाज सेवक—
राजमल संघी

भूमिका

रत्नत्रय-धर्म मोक्ष का मूल है। जैन-शास्त्रों में इसकी अपार महिमा वर्णित है। जीवन की पूर्णता बिना रत्नत्रय-धर्म के नहीं हो सकती। मानव-जीवनका विकास एवं आध्यात्मिक सुख का आस्वादन तभी हो सकता है जब कि हम अपने आधुनिक जीवन में रत्नत्रय-धर्म के सच्चे अनुयायी बनें। दैनिक-जीवन में उसका व्यावहारिक उपयोग सीखें। त्याग का आदर्श और अन्तिम रूप यदि हम जानना चाहते हैं—तो हमें शीघ्र ही रत्नत्रय-धर्म की शरण लेना चाहिये। रत्नत्रय का महात्म्य अनिर्वचनीय है। सुरेन्द्र और शारदा भी इसका गुण-गान करने में असमर्थ हैं। तब भला हमारे जैसे दयनीय परिमितिज्ञानी क्यों कर इसका बखान कर सकते हैं। आत्मिक आनन्द की सच्ची झलक, प्राणियों की नैसर्गिक प्रवृत्तियों का आविर्भाव एवं चिरस्थायिनि अनन्त शांति का लाभ रत्नत्रय-धर्म से ही हो सकता है।

जैन-धर्म एक त्याग प्रधान धर्म है। हाँ, वह स्वार्थ से निवृत्ति कराकर परमार्थ में अनंत गुणी प्रवृत्ति कराने का महान् आदेश देता है। इसीलिये जैनियों के यहां त्याग करने के असंख्य

साधन बतलाये हैं और जैन-धर्म ने त्याग का सच्चा स्वतन्त्र रूप दिखला कर जन-समुदाय का महान् उपकार किया है। त्याग की जड़ रत्नत्रय-धर्म है। जैन-धर्म थोथे त्याग को आडम्बर बतलाता है और रत्नत्रय-युक्त त्याग को मोक्ष का साधक। वैसे तो यदि हम कुछ उदार एवं विशाल-दृष्टि करके देखें तो संसार के सभी धर्मों ने किसी न किसी रूप में रत्नत्रय को मोक्ष का मूल बतलाया ही है, पर जैन-धर्म ने इस रत्नत्रय-धर्म पर ही अपना सारा खाका खींचा है। वस्तुतः यह सत्य-धर्म है। इसकी महिमा अकथनीय होने के साथ ही अज्ञेय है। अनुभव करने की चीज है। विश्व-कल्याण में आत्म-कल्याण का पाठ पढ़ा कर मानव-जीवन को सर्वोच्च, सुन्दर तथा सरस बनाता है।

जैनाचार्यों ने अच्छी से अच्छी बातों को व्रत-विधान का रूप दिया है। इसमें भोले जीवों का हित समझ कर उन्हें उस विषय का कुछ ज्ञान कराना चाहा है। रत्नत्रय आत्मा का गुण है। गुण को व्रत-विधान का रूप देकर उसकी पूजा, मन्त्र, कथा आदि समझाये हैं। इससे उस समय के जन-समाज का बड़ा भारी कल्याण हुआ है। अज्ञानी जन रत्नत्रय जैसे महान विषयों की स्मृति नहीं रख सकते, इसलिये व्रत-विधान का रूप देकर उसकी सदैव भावना चिन्तवन करने का हितकर मार्ग सुझाया है। जैन-कवियों ने समय-समय पर अपने अमूल्य समय और शक्ति का व्यय करके उन आचार्योपदिष्ट व्रतों की पद्यमय पूजाएं बनाई हैं। जिससे राग-रागनियों का ज्ञान, बोलने में सुन्दर और भाषा से अधिक हृदयग्राही होने के कारण तत्कालीन श्रद्धालु-समाज में पद्यमय पूजा, कथा, साहित्य का अच्छा आदर हुआ है। रत्नत्रय की पूजा भी

पद्य में बनी । एक नहीं, दो नहीं, बल्कि चार या पांच कापी तक नवीन-नवीन ढङ्ग से बनाई गई । राग-रागनियों में भिन्नता होने पर भी उनमें सैद्धान्तिक मत-भेद नहीं है आज हम रत्न त्रय-पूजा की एक संशोधित कापी लेकर अपने प्रेमी पाठकों के समक्ष उपस्थित हुए हैं ।

रत्नत्रय-मण्डल-विधान संस्कृत में बना हुआ है । भट्टारक या क्रियाकाण्डी पण्डित लोग ही उसका उपयोग कर सकते हैं । संस्कृतानभिज्ञों के लिए उसका पढ़ लेना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है । यही सोच कर भाषाकारों और कवियों ने बहुत से संस्कृत-जैन-साहित्य का हिन्दी अनुवाद कर डाला है । इससे मनुष्यों का बड़ा उपकार हुआ है । प्रस्तुत-पुस्तक का भी हिन्दी अनुवाद कविता में हुआ । प्राचीन जैन-पूजा-साहित्य का इतिहास देखने से मालूम होता है कि जैन-समाज में रत्नत्रय–मण्डल–विधान की छन्दो-बद्ध चार रचनाए भिन्न-भिन्न कवियों की बनाई हुई काम आती हैं । जयपुरके बाबा दुलीचन्दजीने अपनी एक* कृतिमें रत्नत्रय-व्रतकी चार पूजाओं का उल्लेख करते हुए क्रम से डालूरामजी, टेकचन्दजी, करलहजी, द्यानतरायजी आदि कवियों के नाम लिखे हैं । हमारी राय में प्रस्तुत-पूजा के बनाने वाले स्वर्गीय पं० टेकचन्दजी ही हो सकते हैं । आप एक अच्छे कवि होंगे । त्रिलोकपूजा, कर्म दहन, षोडशकारण, दशलक्षण आदि अनेकों पूजाओं को आपने छन्दोबद्ध किया है । आपका समय इस प्रकार के साहित्य-निर्माण में ही गुजरा होगा । रायबहादुर सेठ भागचन्दजी सोनी के चौबारे में तत्वार्थ-सार नाम

* देखिये—जैन-शास्त्र नाममाला भाषा प्रथम भाग, पेज नम्बर ५५,
मुद्रित कापी—दिसम्बर सन् १८६५ ।

का एक विशाल भाषा ग्रंथ है। उसके बनाने वाले भी टेकचन्दजी ही हैं। संभव है आपने अपने अन्तिम जीवन में उसका निर्माण किया होगा। षोडश कारण पूजा के अन्त में आपने अपना नाम यों दिया है:—

"भावे इनको भक्ति ने 'टेक' मोक्ष सिधि रूप" उक्त पुस्तक की जो कविता है—जगह-जगह जो स्खलन पाये जाते हैं, बिल्कुल वैसी ही कविता की छाप और शब्दों का स्खलन रत्नत्रय-पूजा का है। दोनों पूजाओं की कई पक्तियां भी मिलती हैं। इससे हम अनुमान ही नहीं बल्कि निर्धारित करते हैं कि स्वर्गीय पं टेकचन्दजी ने ही इसको छन्दो-बद्ध बनाया है, अन्य किसी कवि ने नहीं। पुराने भक्ति-युग की कविता होने से हम विशेष कुछ नहीं लिख सकते। भक्त लोगों के लिये यह एक अच्छी चीज़ है। संशोधन कर देने से इसका और भी उज्ज्वल रूप हो गया है। दर्शन-ज्ञान और चारित्र का अच्छा विवेचन मिलता है। इसकी चारित्र-पूजा एक विशेष स्थान रखती है। पुराने ज़माने में कविता का इतना विकाश नहीं हुआ था। इसीलिए पं० टेकचन्दजी की कविता—एक भक्त-हृदय की कविता हो सकती है। भक्ति-रस में यदि कोई गवैया ताल-बेताल भी गाने लगे तो वह भावानुसार पुण्य-बन्ध का ही कारण होता है। उन: लोगों का हमारे सिर पर यह एहसान कम नहीं है कि उन्होंने अपना अमूल्य समय खर्च करके यह धार्मिक साहित्य तैयार किया। जिसका आज हम उपयोग करना भी भूलते जा रहे हैं।

मेरे माननीय मित्रवर राजमलजी संघी ने मुझसे इस पूजा के संशोधन करने का विशेष

अनुरोध किया। आपकी इच्छा हुई कि इसका संशोधन-पूर्वक मुद्रण होजाय तो बहुत अच्छा है। श्रद्धालू-भक्त पूजकों के लिए यह एक अच्छी खासा चीज तैय्यार हो सकती है। मेरा विचार बहुत समय से वर्तमान युग के लिए स्वतन्त्र-मौलिक साहित्य निर्माण करने का है। मैं करूंगा। अभी कुछ अनुभव का आस्वादन हो रहा है। इसको संशोधन करने का मेरा इरादा तो नहीं था पर एक माननीय मित्र की बात को टालना भी अच्छा नहीं समझा-सोचा, इसे ही चलने दो। इसके संशोधन में करीब दो वर्ष का लम्बा समय गुजर गया। भाई राजमलजी की प्रेरणा निरन्तर होती ही रही। उनकी प्रेरणा से ही आज यह समाप्त हुआ है। इसका श्रेय और धन्यवाद भाई राजमलजी को दिये बिना नहीं रहा जाता। अस्तु:—यह सब कुछ हुआ, परमार्थ के लिए, जैन-भक्तों की सेवा के लिए, पैसे का स्वार्थ या मित्र महोदय की चापलूसी के लिए नहीं मैं समझता हूं कि कुछ पण्डित मानी लोग इसे देख कर हँसेंगे, हँसते रहें। यह कोई मेरी स्वतन्त्र रचना तो है ही नहीं—केवल संशोधन है। दूसरे यह भी बात है कि—यह साहित्य सबको खुश करने की चीज नहीं है। पूजकों के लिए ही इसका खास निर्माण और संशोधन हुआ है। पुरानी चीजों को इस प्रकार संशोधन करके काम में लाया जाय तो इससे जैनियों को अच्छी सामग्री मिल सकती है। वैसे देखा जाय तो यह कोई झगड़ालू, सर फोड साहित्य नहीं है। यह तो एक भक्त-हृदय की आवाज है। झगड़ालू साहित्य प्रकाशन से तो हमारा यह कार्य कई गुणा अच्छा है, विशेष स्पष्टीकरण क्या किया जाय। हँसने वाले हँसें, काम करने वाले सच्चे हृदय से काम करें। बस? इसी में भगवान् महावीर के शासन की उन्नति है।

संशोधन में खास-तौर से इस बात का ख्याल रखा गया है कि कवि के भावों में जरा भी परिवर्तन न हो और न प्राचीनता का ही लोप होने पाये। कई स्थलों पर बहुत से नवीन-छन्द बनाकर भी रखे गये हैं। लेकिन उनमें कवि के भावों को ज्यों का त्यों निभाया गया है। सैद्धान्तिक-विषयों में जरा भी फर्क नहीं आने पाया है। बल्कि कहीं-कहीं तो हमने उनको और भी सरल बनाकर रखा है। इस प्रकार अब यह पूजा-पूजकों के लिये एक अच्छी चीज बन गई है।

इसकी चारित्र-पूजा अपना खास महत्व रखती है छियालीस दोष और बत्तीस-अंतरायों का इतना स्पष्ट विवेचन और किसी कविता में नहीं मिल सकता। पूजा करते या कराते समय आपको यह साफ मालूम होगा कि जैन मुनियों का जीवन कितना कठिन और श्रेयस्कर होता है। उसका पालन करना मजाक नहीं, बल्कि तलवार की धार पर नृत्य करना है।

हमने स्वर्गीय पं० टेकचन्दजी के जीवन-वृत्तान्त का परिज्ञान करने के लिये बहुत कुछ परिश्रम किया। लेकिन दुःख है कि हम सिवा इसके कि वे जयपुर के रहने वाले थे। विशेष कुछ नहीं जान सके। अतः इसके लिये हम अपने प्रेमी पाठकों से क्षमा चाहते हैं।

पूजा के साथ ही हमने रत्नत्रय-व्रत-विधि जाप्यमन्त्र और मण्डल-रचना के प्रकार आवश्यक ही नहीं वरन् अधिक उपयोगी समझ कर लगा दिये हैं। आशा है हमारे पाठकगण इससे उचित लाभ उठायेंगे।

इसके प्रकाशन का आयोजन करने में भाई माणकचन्दजी भाँवसा एकाउन्टैण्ट कस्टम डिपार्टमेंट जयपुर एवं भाई सूरजमलजी साह आदि सज्जनों का विशेष हाथ रहा है जिसके लिये हम उन्हें धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते। क्योंकि इन महानुभावों की सतत प्रेरणा से ही यह उपयोगी कार्य बन सका है।

अन्त में मैं अपने प्रेमी पाठकों से आशा करता हूँ कि वे इस संशोधित-कृति को अपनायेंगे और यदि कहीं इसमें प्रूफ-संशोधन वगैरह में कुछ त्रुटि रह गई हो तो वे मुझे उसकी सूचना देकर अनुग्रहीत करेंगे।

श्रावण शुक्ला पूर्णिमा
वीर नि० २४६४

संशोधकः—
आनन्द-शास्त्री
जयपुर

रत्नत्रय-व्रत-विधि

जैन-समाज में सैकड़ों नर-नारि आये वर्ष रत्नत्रय-व्रत करते आये हैं। व्रत की सफलता तभी हो सकती है, जबकि उसकी विधि को अच्छी तरह समझ कर किया जाय। अतः श्रद्धालु श्रावकों के हितार्थ हम यहां ग्रन्थान्तरों से रत्नत्रय-व्रत-विधि लिखे देते हैं।

भादों, माघ और चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में त्रयोदशी, चतुर्दशी एवं पूर्णिमा के दिन यह व्रत किया जाता है पहिले द्वादशी को व्रत की धारणा तथा प्रतिपदा को पारणा करना चाहिये। तात्पर्य यह है कि द्वादशी को श्री जिनेन्द्र भगवान का पूजनाभिपेक करके एकाशन करे और सामायिक करके चारों प्रकार के आहार और समस्त सावद्य क्रियाओं का पश्चात् त्याग करे। जिनालय में जाकर त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा तक तीन दिन उपवास करे। चारों विकथाओं का त्याग करे। प्रतिपदा को सामयिक-पूजनाभिपेक और स्वाध्यायादि पुण्यक्रियाओं से निवृत्त होकर किसी अतिथि वा दुःखित-भुखित को भोजन कराकर स्वयं भोजन करे। इस दिन भी एकाशन ही करना चाहिये। व्रत-विधान के दिनों में अपना समय सामायक और स्वाध्याय

में ही व्यतीत करना चाहिये। इस तरह तेरह वर्ष तक यह व्रत किया जाय और बाद में उद्यापन। उद्यापन की शक्ति न हो तो दुगुना व्रत करें। यह व्रत की उत्कृष्ट विधि है।

यदि इतनी शक्ति न हो तो बेला व कांजी आहार करके आठ वर्ष पर्यन्त व्रत करे। यह माध्यम विधि है।

यदि इतनी ताकत भी न होवे तो स्वशक्ति प्रमाण एकाशन करके तीन ही वर्ष अथवा पांच वर्ष तक व्रत करे, पश्चात् उद्यापन। यह जघन्य-विधि है। रत्नत्रय-व्रत ही मोक्ष का मार्ग है। प्रत्येक जैनी को अपने क्षणिक जीवन में इस प्रकार के महान व्रत अवश्य करना चाहिये।

—संशोधक

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

अथ-रत्नत्रय-पूजा

भक्त-स्तुति

वेसरी छन्द :—

साधो ! सेवो भावा लाई ।
तीनो हीरा गाना गाई ॥
ले-ले-नीका द्रव्य अपारा ।
पावोगे शिव-राज-पियारा ॥ १ ॥

नाराच-छन्द :—

भलो सु ज्ञान दर्शना चारित्तरा सु सार है ।
भवा समुद्र नाव मोच्च पंथ का जुधार है ॥

यही सु सिद्ध-पंथ का नहीं जु और जानिये।
जजों सु दर्श ज्ञान चर्ण भक्त के उर आनिये॥ २॥

(३)

सार यही रतन तीन पारखी मुनिंद हैं।
दहैं सु कर्म-काष्ठ को जजै सु ताहि इन्द्र हैं॥
नहीं जु राग-दोष ताहि पाय एह दास जी।
बार त्रय नमन होउ धन्य सुख रास जी॥ ३॥

(४)

मुनिन्द याहि पायके नशाय हैं भवा सही।
जिनेन्द्र होय मोक्ष पायऽनंत सौख्यता गही॥
यही जु तीन मानिका सु मोक्षपंथ मानिये।
जजों सु ताहि भव्य जन पूज-विधि ठानिये॥ ४॥

(५)

यही जु तीन-रत्न इन्द्र-चक्र के न पाइये।
खगेन्द्र वृन्द चन्द्र के न भूप के सुहाइये॥

मुनीश होय पाइ के सु मोक्ष को लहै सदा।
दर्श-चर्ण-ज्ञान बिन मोक्ष नाँहि हो कदा ॥ ५ ॥

(६)

नमो सुबोध दर्श-चर्ण मोक्ष का यही पथा।
रहो सदाहिये जुभक्त मो तनी यही कथा ॥
भवान्तरै मिलो सु मोहि रत्न तीन आयके।
नहीं जु और चाह होइ शर्न इन पायके ॥ ६ ॥

हरिगीता छन्द:—

(७)

यह रतन तीन अपार मौलिक पारखी बिरला यहाँ।
मोह वश हो भव्य-प्राणी भेद को पावे कहाँ ॥
है निकट संसार जिन के भेद इनका तिन लहा।
मुनि होय राज विहाय पावे पुण्य-पदवी वे महा ॥ ७ ॥

(८)

इनहीं प्रभावें, मोक्ष पावें, भव नशावें मुनिवरा।
संसार क्षणिक विचार जिनने मुक्ति-पथ में पगधरा॥
यह ज्ञान सम्यक् दरस चारित तीन हीं सुखदाय हैं।
कर लेय अर्घ जजों सदा ही अखिल दुख विनशाय हैं॥ ८॥

अडिल्ल :—

रतनत्रय अघ हरैं स्वर्ग-सुखदाय जी।
रतनत्रय सो आभूपन नहिं पाय जी॥
याकी शोभा देखि इन्द्र से पग परें।
कर्म-विदारक मंत्र सिद्धथल ले धरें॥ ९॥

वेसरी छन्द :—

रतनत्रय बिन भव-भरमाय। रतनत्रय तजि पाप कमाय।
अब उर बांछा इम-मम भाई। आय मिलो रतत्रय सांईं॥ १०॥

सोरठा:—

यह रत्नत्रय सार, शरन मिलो हमको सही।
तारन भवदधि-धार। तातें मैं पूजा करों ॥ ११ ॥

दोहा:—

रतनत्रय पूजा सही, सब सुख की करतार।
तातें प्रणमों भाव सों, होउ भवार्णव पार ॥ १२ ॥

इत्येवं-प्रकारेण पूजा-प्रतिज्ञां कृत्वा मंडलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

समुच्चय-पूजा

स्थापना

गीता-छन्द:—

सम्यक् दर्शन-ज्ञान चारित मोक्ष मारग जिन सही।
शिव-वन्छका ही धरै याको इन बिना शिव ना कही ॥

५

इमि जान तीनों रतन पूजों पाय के इस ही धरा।
उर भक्ति-धर मन-वचन-काया ता-फलैं सब अघहरा ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन, सम्यक्-ज्ञान, सम्यक् चारित्र ? अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन, सम्यक्-ज्ञान, सम्यक् चारित्र ? अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः संस्थापनं ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन, सम्यक्-ज्ञान, सम्यक् चारित्र ? अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि करणं ॥

अष्टक :—

नीर निरमला पदम-कुण्ड का सार जी।
उजला क्षीर समान नयन सुखकार जी ॥
रतनन झारी विषै लेय गुन गाय हैं।
जजों सु सम्यक्-दर्श ज्ञान चरिताय हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बावन चन्दन अगर गन्ध शुभलाय जी ।
नीर निरमला थकी घसों विधि पाय जी ॥
कनक पियाले धरों भक्त गुन गाय हैं।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान चरिताय हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्तत-उज्वल-सुभग शुद्ध मैं ल्याइ हों ।
जजों सु करुणा सिन्धु अखय पद पाइ हों ॥
कनक रकाबी मांहि धारि गुन गाय हैं ।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान-चरिताय हैं ॥३॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय अत्ततान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कलप वृत्त के फूल रङ्ग नाना धरें ।
महके गंध अपार चहों दिशि विस्तरें ॥
ऐसे पुष्पतनी कर माला लाय हैं ।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान चरिताय हैं ॥४॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा !

सुभग लेय नैवेद्य स्वादु सुखकार जी।
मोदक फेनी आदि शुद्ध अविकार जी॥
स्वर्ण-पात्र धरि जजों भक्ति उर लाय हैं।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान-चरिताय हैं॥५॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक मणिमय महाज्योति करता सही।
जाके तेज प्रभाव मोह नाशें सही।
प्रगट होय तब ज्ञान-भानु सुखदाय हैं।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान-चरिताय हैं॥६॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशधा धूप महान गन्ध पूरित सही।
अगर चन्दना आदि द्रव्य की जो मही॥

धूम-ध्वज में खेय अचल-पद पाय हैं।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान चरिताय हैं ॥७॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

आम्र-काम्रका भले सुश्रीफल सार जी ।
केला दाख अनार भरे शुभ थार जी ॥
मोक्ष-प्राप्ति के हेतु चित्त हुलसाय हैं ।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान चरिताय हैं ॥८॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नीर चंदना अखत पुष्प चरु जानिये ।
दीप धूप फल अर्घ लेय इह आनिये ॥
धार भक्ति गुन गाय हृदय हरपाय है ।
जजों सु सम्यक्-दर्श-ज्ञान चरितांय है ॥९॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

तीन रतन मुनिराज धन, अविनाशी विन छेह।
चहैं इन्द्र हूं थुति करै, कवि मांगत है येह॥

त्रिभंगी छन्द

सम्यक्-दृश जाके, हो शिव ताके, दोष न वाके होय कदा।
सम्यक्-सुध ज्ञानो, हो भ्रमहानो, तत्व बतानो, मोक्षप्रदा॥
चारित-सुध धारैं, सम्यक् लारैं, भवदधि तारें नाव जिसे।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरुवच इतना, पूज तिसे॥१॥
यह सम्यक्-धारा, सब को प्यारा, अघ तै न्यारा, धर्म धरा।
सुध ज्ञान उपावो, दोष नशावो, शिवमग धावो, कर्म हरा॥
सुध चारित नीका, सुखदाजियका, शिव तिय पियका, मान जिसे।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना पूज तिसे॥२॥

जिन सम्यक् पाया, दोष उड़ाया, जिन गुन गाया दाम धरा ।
ले सम्यक् ज्ञाना, अमृत पाना, अव्रत महाना, पुष्टि करा ॥
चारित भव सागर, नाव उजागर, पार उतारग जान जिसे ।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना, पूज तिसे ॥३॥
सुध सम्यक्-सारं, भव दधितारं, देय अपारं, सिद्ध थलं ।
यह सम्यक् ज्ञानो, पूज्य महानो, सव विधि जानो, युक्ति कलं ॥
चारित सुध सोई, शिवमग होई, तारक जोही, नाव जिसे ।
यह तीनो रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना पूज तिसे ॥४॥
सम्यक् परभावा, नहिं भव दावा, मरन मिटावा, सुखकारी ।
जे सम्यक् ज्ञानी, दयानिधानो, सव विधि जानी, गुन धारी ॥
सव तत्व वतानो, पाप नशानो, पुण्य वढ़ानो जान इसे ।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना, पूज तिसे ॥५॥
सम्यक् घरजाके, सुरभृतताके, कमी न वाके, धनधारी ।
जे सम्यक् जानै, मिथ्या भानै, दोप नशानै, शुभकारी ॥

चारित धरि जोगी, शिव तिय भोगी, मोक्ष नियोगी, जीव जिसे ।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना, पूज तिसे ॥६॥
सम्यक्दृश सोही, लखै न मोही, साँच जु सोही, कर्म हरे ।
जिन भाषित जानो, निज पर ठानो, सम्यक्–ज्ञानो, सो ही धरे ॥
जो चारित धारे, कर्म निवारे, जीव सुधारे, ध्यान जिसे ।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरु वच इतना, पूज तिसे ॥७॥
सम्यक्–सरधाना, कुगुरु छुड़ाना, बुध परधाना, मोक्ष चहा ।
जे सम्यक् ज्ञानी, जिन धुनि जानी, आकुलहानी, पूज्य कहा ॥
जे चारित धरिया, निज अघ हरिया, बहु सुख भरिया, जान जिसे ।
यह तीनों रतना, कर इन जतना, गुरुवच इतना, पूज तिसे ॥८॥

दोहा :—

सम्यक्—दर्शन ज्ञान शुभ, चारित और मिलाय ।
तीनो मग शिव जिन कहै, या मग शिवथल जाय ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राय जयमाला पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जो जन या पूजा करे—भक्ति-भाव उर धार।
पुत्र-मित्र-धन सम्पदा—ता घर बढ़े अपार ॥

इत्याशीर्वाद।

सम्यक्दर्शन पूजा

स्थापना :—

अडिल्ल-छन्द

सम्यक्-दर्शन वहाँ जहाँ वसु मद नहीं।
शंकादिक वसु दोष नहीं जाके कहीं ॥
नहीं मूढता तीन आयतन षट कहे।
इन विन सम्यक् थाप जजो शिव पद लहे।

ॐ ह्रीं पंच विंशति दोष रहित शुद्ध सम्यग्दर्शन ? अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पंच विंशति दोष रहित शुद्ध सम्यग्दर्शन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः संस्थापनं ॥

ॐ ह्रीं पंच विंशति दोष रहित शुद्ध सम्यग्दर्शन अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ॥

अष्टक

गीता-छन्द

ले नीर सागर चीर केरो उज्वलो सुखदायजी ।
शुभ गंध निरमल तरस बिनसो बिना सावद ल्यायजी ॥
धरि रतन झारी हाथ ले निज भक्ति उर में बहुधरी ।
मैं जजों सम्यक-दर्श मल बिन शुद्ध हों थुति उच्चरी ॥

ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं ॥

बावन सुचंदन गन्ध निरमल नीर तें घसि ल्याय हैं ।
शुभ अगर आदि मनोज्ञ गन्धसु तास में मिलवाय हैं ॥
ले कनक पात्र मंझार सुन्दर भक्ति-धन मन में धरी ।
मैं जजों सम्यक-दर्श मल बिन शुद्ध हों थुति उच्चरी ॥

ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक्दर्शनाय भवातापविनाशनाय चंदनं ।

अक्षत सु उज्वल लेय प्रासुक खंड तिन मैं लाइ हों ।
शुभ गन्ध मय तिन धोय नीके आप कर ले आइ हों ॥

कनक भाजन माँहि लेकर भक्ति शुभ फलदा करी ।
मैं जजों सम्यक्-दर्श मल विन शुद्ध हों थुति उच्चरी ॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् ॥
बेला चमेली रायबेली पहुप नानाविधि सही ।
जाकी सुगन्धि अपार पाकर गूँजते मधुकर वहीं ॥
कर माल तिनकी हाथ ले निज भावना सुध उर धरी ।
मैं जजों सम्यक्-दर्श मल विन शुद्ध हों थुति उच्चरी ॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक्-दर्शनाय काम बाण विध्वंसनाय पुष्पं ।
नैवेद्य मोदिक आदि कीने और भी बहु विधि सही ।
तिनमांहि नाना भेलि रस को स्वाद की मानो मही ॥
चरु करी या विधि भाव सेती नाथ चरणन में धरी ।
मैं जजों सम्यक् दर्श मल विन शुद्ध हो थुति उच्चरी ॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं ।
कर दीपमणिमय जोतिधारी मोहनाशक जो सही ।
धरि भले पातर हेम के मधि आरती करनो चही ॥

उर भक्ति मन बच काय धरिके विनयते मुख थुति करी।
मैं जजो सम्यक् दर्श मल विन शुद्ध हो थुति उचरी॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय मोहान्धकार विनशाय दीपं॥
धूप दशधा शुद्ध ले के जो करी हितकारिणी।
तिस मांहि गन्ध अपार आवै भ्रमर शब्द उचारिणी॥
सम जात की शुभ धूप करके अग्नि में थुति कर धरी।
मैं जजों सम्यक् दर्श मल विन शुद्ध हों थुति उचरी॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय अष्टकर्म दहनाय धूपं॥
श्रीफल सुपारी लोंग खारिक भले जान बदामजी।
इन आदि और अनेक फल ले महा सुख के धामजी॥
उर भक्ति प्रभु की ठानि निज मन और विनती मैं करी।
मैं जजों सम्यक् दर्श मल विन शुद्ध हों थुति उचरी॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय मोक्ष फल प्राप्तये फलं॥
जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु ले दीप धूप फला सही।
सब मेल अर्घ बनाय नीको भले पातर मैं ठई॥

कर पूज मन वच काय प्रभु की भक्ति चरणन में धरी।
मैं जजों सम्यक् दर्श मल विन शुद्ध हों थुति उचरी ॥
ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यक् दर्शनाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्घावली

॥ त्रिभंगी छन्द ॥

हम नाना भामा अति बल ठामा धन के धामा सुखदाई।
तिनराज सुमाने सब जग जाने वचन प्रमाने सब भाई ॥
यह जाति सु महा जानि निखद्दा अघ की हद्दा धार हिये।
याको जु निवारे सम्यक् सारे शिव पद धारे जज थुतिये ॥
ॐ ह्रीं जाति मद रहित सम्यक् दर्शनाय अर्घं ॥ १ ॥
मैं बहुत कमाऊँ द्रव्य उपाऊं सब दिश जाऊँ खेप लई।
मोमें बुध नीकी विनय करी की युक्ति धरी की बात सई ॥

जिस जा मैं जाऊँ, आदर पाऊँ, नोनिधि ल्याऊँ, जानहिये।
यह लाभ सुमद्दा, जानि निखद्दा, सम्यक्श्रद्धा, जज थुतिये ॥
ॐ ह्रीं लाभ मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् ।
सुकुल हमारा, सब को प्यारा, जाति-सुधारा ज्ञान मई ।
शुभ बाबा मेरा, नृपढिंग केरा, काम करेरा जानि सई ॥
यह कुलमद जानो, अघ को थानो, तजि बच मानो भवि-प्रानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं कुल मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।
जो रूप हमारे, और न धारे, देखो सारे, मदन जिसो ।
सुरहू लख लज्जै, हम छवि सज्जै, बहु का कज्जै, जानि इसो ॥
यह रूप मदा है, सम्यक्दा है, ज्ञान नशा है, जग जानी ।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिन धुन जोई मुनिमानी ॥
ॐ रूप मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
मैं तपसी भारी, भक्त अपारी, वास धरारी, बरस मई ।
मैं ने मन जीता, जगमयभीता, नहिं तन मींता, जानि सई ॥

यह तप मद जानो, अघ को थाँनो दोप वढ़ानो कर हानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी॥
ॐ ह्रीं तप मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा॥
हम हैं वलवाना, सब जग जाना, गज मद हाना, जोध सही।
मेरे वल आगे, अरिभय लागे, सव जन भागे, जानि कही॥
यह वल मद जानो, पुण्य नशानो, पाप-वढ़ानो कर हानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी॥
ॐ ह्रीं वलमद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्घपामीति स्वाहा॥
मैं वहुश्रुत जोई, भरमन कोई, निर्भय होई, वाद करूँ।
षट्मत मैं देखा, ज्ञान–विशेखा, नशि भ्रम–रेखा, युक्ति धरूँ॥
यह विद्या मद भाई, नाश कराई, बोध–नशाई, सुनि वानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी॥
ॐ ह्रीं विद्यामद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥
मोको नृप मानै, सब सनमानै, जग पहिचानै हुकुम घनो।
चाहों मैं मारों, तथा उबारों, वचन उचारों, सो ही ठनौ॥

यह मद अघकारी, तजि भयधारी, भाव संभारी, सुनि प्रानी ।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

जहाँ शंका आवै, धर्म नशावै, पाप बढावै, दुखदाई ।
शंका जब होई, सम्यक् खोई, भरमत मानी, मुनि बोई ॥
यह शंका मल है, अघ का थल है, दुखदा फल है भवि प्रानी ?
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं शंका मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥

मैं धर्म कराऊँ, पुण्य-बढाऊ, सुख अति पाऊँ, मोहि मिल्यो ।
मेरा यश होवे, सुर-नर-जोवे, अरि-जन-रोवे, पुण्य खिल्यो ॥
यह वाँछा जानो, काँक्षा मानो, तजि वच आनो, जिनवानी ।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं कांक्षा मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

पर वस्तु सु जोवे, विन चित होवे, अरति बढोवे, मनमानी ।
यह वस्तु बुरी है, क्यों जु धरी है, कौन करी है, दुखदानी ॥

यह दोष दुगंछा, मेटत संछा, तजि भय वंछा, श्रुत जानी ।
सम्यक् शुभ सोई, जजु अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सा मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
जो भेद न पावें, शीश नमावें, भक्ति-बढ़ावें, देव कही ।
सुर सबको माने, ज्ञानन आने, मार्ग न जाने, शुद्ध सही ॥
यह मूढ़ सुभागा, पाप बभागा, तज शुभ लागा, मन आनी ।
सम्यक् शुभ सोई, जजु अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं मूढ़ दृष्टि रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
पर औगुन जोई, उनके न सोई, सुख कहँ कोई, पाप भरा ।
पर के छल देखै, कहत विशेखै, आप न पेखै, जानि परा ॥
कहैं दोष पराया, यह अघ भागा, त्याग सुभागा, शुभ आनी ।
सम्यक् शुभ सोई, जजु अघ खोई, जिन धुनि जोई, मुनिमानी ॥
ॐ ह्रीं परगूहन मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
लख मार्ग पराया, दोष भड़ाया, पाप उपाया, मन लाई ।
याको जु खिमाऊँ, हँसी कराऊँ, तब सुख पाऊँ, बन आई ॥

यह अवगुन जानो, धर्म नशानो, तजि हित जानो, शुभ जानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी॥
ॐ ह्रीं अस्थिति करन मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

धरमी जन जोवे, हरप न होवे, लखि चित रोवे, अघधारी।
ताको जु निहारे, नेह न धारे, वचन उचारे, भयकारी॥
यह वाछल नांहीं, पाप बढ़ाहीं, दोप कहाहीं, तजि ज्ञानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनिमानी॥
ॐ ह्रीं अवात्सल्य मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

धरमोत्सव जाने, हर्ष न आने, नांहि सुहाने, भवि प्रानी।
नहिं ताहो सरावे, दोप उपावे, पाप कमावे नित ठानी॥
यह दोप कहानो, धर्म नशानो, द्वेप बढ़ानो, कर हानी।
सम्यक् सुध सोई, जज अघ खोई, जिन धुनि जोई मुनि मानी॥
ॐ ह्रीं अप्रभावना मल रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

चौपाई-छन्द

वीतराग सर्वज्ञ न छार, पूजे और देव दुखकार।
सो यह दोप मूढ़ता जोय, इस विन जजि सुध समकित होय ॥
ॐ ह्रीं देवमूढता रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥

गंगा आदि नदिन के मांहि, धर्म मानि न्हावै तँह जांहि।
सो यह दोप मूढ़ता जोय, इस विन जजि सुध समकित होय ॥
ॐ ह्रीं लोक मूढ़ता दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

वीतराग नहिं नग्न शरीर, सेवें कुगुरू राग धरि धीर।
सो यह दोप मूढ़ता जोय, इस विन जजि सुध समकित होय ॥
ॐ ह्रीं गुरुमूढता रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

करम नाश विन देव कहाय, तिनकी महिमा कहत वनाय ॥
सो यह दोप आयतन जोय, इस विन जजि सुध समकित सोय ॥
ॐ ह्रीं कुदेव-प्रशंसा-आयतन दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

२३

ताहि कुदेव भक्त की मानि, करत बड़ाई निज हित जानि।
सो यह दोष आयतन जोय, इस बिन जजि सुध समकित होय॥
ॐ ह्रीं कुदेव पूजकस्य-प्रशंसा आयतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् ॥

दया रहित जो धर्म कहाहिं, तिनकी महिमा निशि दिन गांहि।
सो यह दोष आयतन जोय, इस बिन जजि सुध समकित होय॥
ॐ ह्रीं कुधर्म-प्रशंसा आयतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

हिंसा धर्म सेविका जान, करत बड़ाई तिन शुभ मांनि।
सो यह दोष आयतन जोय, इस बिन जजि सुध समकित होय॥
ॐ ह्रीं कुधर्म पूजकस्य प्रशंसा आयतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् ॥

राग द्वेष युत परिग्रहवान, तिन कुगुरुन का करत बखान।
सो यह दोष मूढ़ता जोय, इस बिन जजि सुध समकित होय॥
ॐ ह्रीं कुगुरू प्रशंसा आयतन दोष रहित सम्यग्दशनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

कुगुरुन के सेवक जे जान, तिनकी महिमा करत बखान।
सो यह दोष आयतन जोय, इस बिन जजि सुध समकित होय॥
ॐ ह्रीं कुगुरू पूजकस्य प्रशंसा आयतन दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् ॥

पद्धरी-छन्द

यह द्यूत व्यसन सब पाप मूल, तिन धार लहै दुख रूप शूल।
दे अपयश बध-बंधन सु जोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त होय॥
ॐ ह्रीं द्यूत व्यसन रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

मल खांय महा नित अशुचि खानि, हिंसक बन निज सब करत हानि।
तिन देख नहीं चित मलिन होय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त होय॥
ॐ ह्रीं मांसव्यसन रहति सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

मद मोह मगन वे नर बखानि, पीवत मदिरा शुभ कृत्य जान।
जग-मांहि पतित तिन जन सुजोय, इस बिन जजि सुध-सम्यक्त होय॥
ॐ ह्रीं मदिरा व्यसन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

गनिका जगपातल झूँठ जेम, जन जगतनिंद्य परसत सुतेम।
यह व्यसन नरक-पद-दाय होय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त होय॥
ॐ ह्रीं गनिका व्यसन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥

जे जीव तिणाँ-चुग वन बसाय, तिन मारे मूरख निज धनुप ल्याय।
यह व्यसन नरक-पद-दाय जोय, इस बिन जजि सुध-सम्यक्त होय ॥
ॐ ह्रीं आखेट व्यसन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

पर द्रव्य हरैं तिन चोर जानि, ते बध-बंधन जग निन्दथानि।
यह चोर व्यसन दुखदाय जोय, इस बिन जजि सुध-सम्यक्त होय ॥
ॐ ह्रीं तस्कर दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

पर नारि व्यसन इत जीव धार, ते लहैं नरक-दुख पाप भार।
यह व्यसन नरक-पद-दाय जोय, इस बिन जजि सुध-सम्यक्त होय ॥
ॐ ह्रीं परदारा व्यसन दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥

चौपाई-छन्द

किये दान संक्रान्त सुजान, होय सुखी नांहि दुख मान।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं संक्रान्ति दान दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

ग्रह पूजे सुखसाता जानि, नहीं जजे दुख रोग बखानि ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं ग्रह–पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
पूजे वसुधा धर्म–नशाय, इस विधि मिथ्या भाव उपाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं पृथ्वी-पूजन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
हिंसा आगम सेव कराय, चेटक मंत्र–जंत्र पुजवाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं कुधर्म-सेवा रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
पर्वत पूजे दीर्घ बखानि, याके जजे कहे पुनिवान ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं पर्वत पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥
नदी माँहि न्हाये अघ जाय, होय पुन्य जिय को सुखदाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं नदी-समुद्र स्नान दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अग्नि माँहि जीवित जल जाय, कहै जीव ये देव बनाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं अग्नि-पात रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

कुगुरू देव तें साता पाय, सुखद माँनि पूजे तिन जाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं कुगुरू सेवा दोष रहित सम्यग्दशनाय अघम् निवपामीति स्वाहा ॥

अग्नि तत्व को देव बताय, पूजे मूर्ख महा सुख पाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं अग्नि-पूजा दोष-रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्मपामीति स्वाहा ॥

गाय मूत्र शुभ पूँछ बखानि, पूजे मूढ महा अज्ञान ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं गौमूत्र गौपुच्छ पूजा दोप-रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥

गज घोटक वृप सेव कराय, पुण्य जानि पजे मन लाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं वाहन-पूजा दोप रहित सम्यग्दर्शताय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥

असि वरछी अरु तोप बन्दूक, पूजें जानि सुकृत को टूक ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं शस्त्र-पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

बालक पूजे देवा मानि, मूढ महा मिथ्यामति जानि ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं बालक-पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

पर्वत पडि जे काय छुडाय, वांछित सुख की राखे चाय ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं पर्वत-पतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

हिंसा देव दया बिन जानि, पूजे हर्षित हो सुख मानि ।
ऐसो भरम तहाँ नहीं होय, इस बिन जजि सुध सम्यक् सोय ॥
ॐ ह्रीं हिंसा-देव सेवन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

निशि आहार करै नहीं सोय, ताके उर करुणा बहु होय ।
माँस—आहारी निशि जो खाय, इस बिन जजि सुध सम्यक् थाय ॥
ॐ ह्रीं रात्रि-भोजन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

अनछान्यो जल पीवै नाँहि, दया सहित निज धर्म निभाँहिं ।
ऐसे गुन तामें जो होय, सो सम्यक् पूजो मल खोय ॥
ॐ ह्रीं अनगाल्या-जल पीवन दोप रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

इत्यादिक गुन युत जे होय, कहैं दोष ते एक न जोय ।
निश्चय औ व्यवहार सुभाय, सो सम्यक् पूजो श्रुति गाय ॥
ॐ ह्रीं सर्व-दोष रहित शुद्ध सम्यग्दर्शनाय अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जयमाला

दौहा:—

सम्यक् साँचा धर्म है, मोक्ष वृक्ष का मूल ।
ताते ध्यावो सुगुन धर, पहुँचो जग के कूल ॥

वेसरी-छन्द :—

सम्यक् सार धर्म का बीजा । यातैं पाप मैल सब छीजा ॥
याही तै जगपूज्य कहावैं । सम्यक् जामन मरन मिटावै ॥
सम्यक्–सा सज्जन नहीं कोई । सम्यक् कल्पवृक्ष सम होई ॥
सम्यक् के गुन मुनि मुख गावें । सम्यक् जामन मरन मिटावै ॥
सम्यक् मंगल कारिज–सारै । सम्यक् मिथ्या रोग विडारै ॥
सम्यक् तै सुध–धर्म कहावै । सम्यक् जामन–मरन मिटावै ॥
सम्यक् रतन अमूल्य कहावै । सम्यक् बिन सब जग भरमावै ॥
सम्यक् सुर–शिव थान दिखावै । सम्यक् जामन-मरन मिटावै ॥
सम्यक् बिन मुनि को शिवनाँहीं । सम्यक् सहज जीव शिवपाही ॥
सम्यक् देव—धर्म बतलावै । सम्यक् जामन-मरन मिटावै ॥
सम्यक् अग्नि–कर्म निज जारै । सम्यक् असुर मोह-दल मारै ॥
सम्यक् दृष्टि ध्यान शुभ ध्यावै । सम्यक् जामन-मरन मिटावै ॥
सम्यक् शरण जीव जे आये । ते अजरामर अचल कहाये ॥

३१

सम्यक् तैं चव गति नहिं पावै । सम्यक् जामन-मरन मिटावै ॥
सम्यक् तैं हरि को पद होई । सम्यक् सार मोक्षसुख जोई ॥
सम्यक् पालक जे नर सन्ता । ते कहलाहिं अचल भगवन्ता ॥

दोहा:—

सम्यक् मेरे शीस पर, करो अचल शुभ वास ।
सम्यक् सो सन्मुख सदा, जे-ते तन में स्वांस ॥

ॐ ह्रीं शुद्ध सम्यग्दर्शनाय जयमाला पर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा:—

सम्यग्दर्शन श्रेष्ठ हैं, सब धर्मन में सार ।
पूजो भविजन भाव सों, करो सुयश विस्तार ॥

इत्याशीर्वाद:

इति—सम्यक्—दर्शन—पूजा ।

——

अथ सम्यग्ज्ञान पूजा

स्थापना

चौपाई

मति श्रुत अवधि ज्ञान मन लाय। मन पर्यय केवल शुभ थाय ॥
ये ही पाँचो सम्यक् ज्ञान। पूजों थापि इहाँ हित मानि ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानं अत्रावतरावतर संवौपट आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानं-अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः सस्थापनम्।
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानं अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट सन्निधिकरणं।

भुजंग प्रयात

लिया नीर नीका पद्मकुँड केरा। महा निरमला गंध-जुत अमर हेरा।
धरया कनक झारी घनी भक्ति लाई। जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई॥

ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

भले गन्धधारी लिया चन्दना है। धरया नीर तें फेर कर वन्दना है ॥
धरी भक्ति उर में भले पात्र लाई। जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

भले तंदुला उज्वले खंड नांही । धरे गंध नीकी भली सोम मांही ॥
लिये हाथ अपने भली भक्ति गाई । जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
भले गन्ध-युत फूल ले माल कीनी । घने वर्न के कोमला-भक्ति चीनी ॥
धरे हाथ माँही भली भक्ति गाई । जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
नैवेद्य नीका हितु जानि जियका । भले मोदिका सार रस डार नीका ॥
धरै पात्र में हाथ ले भक्ति गाई । जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
करै दीप तम नाश शुभ रत्न केरा । धरै थाल माँही खुशी जीव मेरा ॥
करी आरती हर्षि कै भक्ति गाई । जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
ले धूप दशधा भली गंधधारी । खिलै महक जाकी चहूँ ओर भारी ॥
करी वीनती अगनि में खेय भाई । जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

३४

लए श्रीफला लौंग खारिक विदामा। चढ़ाऊँ चरण में मिले मुक्ति-ग्रामा ॥
धरे पात्र माँही भली भक्ति लाई। जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ।

ले नीर चन्दन पुष्प अक्षत सुजानो। नैवेद्य फल दीप चरू धूप मानो ॥
करें अर्घ सुन्दर घनी भक्ति गाई। जजों ज्ञान सम्यक् घने सौख्यदाई ॥
ॐ ह्रीं सम्यक्ज्ञानाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ प्रत्येक-अर्घ

वेसरी छन्द

सपरस इन्द्री तैं सब जाने। योग्य काल में विषय पिछाने ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जौ होई। सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्रीं स्पर्शन-मतिज्ञानाय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

रसना तै सब ज्ञेय सुजाने । पंच भेद ताके उर आने ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई । सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्रीं रसना इन्द्रिय मतिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

नासिक इन्द्रिय जाने भाई । दोय भेद ताकी विधि गाई ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई । सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्रीं नासिका इन्द्रिय मतिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

नयनन तै सब वस्तु लखाने । पंच भेद ताके शुभ माने ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई । सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्रीं चक्षु इन्द्रिय मतिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कर्ण द्वार तै शब्द पिछाने । तीन अंश ताके शुभ जाने ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई । सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्री कर्णेन्द्रिय मतिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

मन विकल्प से सब कुछ जाने । तीन काल की वस्तु बखाने ॥
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई । सो मतिज्ञान जजों अघ खोई ॥
ॐ ह्रीं मनोइन्द्रिय मतिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

चौपाई

ग्यारह अंग सु-पूरब जान । अंगबाह्य यों सुरत बखान ॥
ये सब सम्यक् सहित सुभाय । सो श्रुतज्ञान नमों मन लाय ॥
ॐ ह्रीं अंगपुर्वादि श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

खावैं जतन-जतन ते चले । बोलें जतन-जतन तैं हले ॥
ऐसे आचारंग में कही । सो श्रुत-सम्यक् पूजों सही ॥
ॐ ह्रीं आचारंग श्रुतज्ञानाय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

विनय विना नहीं ज्ञान लहाय । विनयी जन हीं सब श्रुत पाय ॥
सूत्रकृताँग मांहि इम कही । सो श्रुत सम्यक् पूजों सही ॥
ॐ ह्रीं सुत्रकृतांग श्रुतज्ञानाय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जीवथान उनवीस कहाय । तथा च्यारसो पट् श्रत गाय ॥
यह स्थानांग मांहि सब कही । सो श्रुत सम्यक् पूजों सही ॥
ॐ ह्रीं स्थानांग श्रुतज्ञानाय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

जे-जे वस्तु बराबर होय। द्रव्य-क्षेत्र कालादिक जोय ॥
समवायांग माँहि इम कही। सो श्रुत सम्यक् पूजों सही ॥
ॐ ह्रीं समवायांग श्रुतज्ञानाय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ११ ॥

अस्ति-नास्ति युत जीव बखान। नियम अपेक्षा से सब जान ॥
व्याख्या प्रज्ञप्ति माँहि इम कही। सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं व्याख्या प्रज्ञप्ति श्रुतज्ञानाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥ १२ ॥

अतिशय दिव्य ध्वनि मन लाय। समवशरण जिनके शुभ गाय ॥
ज्ञातृकथांग माँहि सब कही। सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं ज्ञातृकथांग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १३ ॥

एकादश प्रतिमा विधि जोय। और बहुत श्रावक गण होय ॥
अङ्ग उपासक में इम कही। सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं उपासकाध्ययनांग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥

एक एक जिन समय मंझार। अंतः कृत केवल दश धार ॥
अंत कृतांग माँहि इम कही। सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं अन्तः कृतांग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १५ ॥

एक एक जिन धारै सोय । दस दस मुनि अहमिंदर होय ॥
अनुत्तरोपपादक इम कही । सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं अनुत्तरोपपादिक दशांग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १६ ॥

गई वस्तु वा मूँठी माँहि । पूछे प्रश्न कहै मुनि ठाँहि ॥
प्रश्न व्याकरण माँहि सब कही । सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं प्रश्न व्याकरणांग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १७ ॥

शुभ वा अशुभ कर्म फल जान । तीवर मन्द सब भेद बखान ॥
सूत्र विपाक माँहि इम कही । सो श्रुत सम्यक् पूजो सही ॥
ॐ ह्रीं विपाकसूत्र श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १८ ॥

अडिल्ल—छन्द

व्यय-ध्रुव अरु उत्पाद द्रव्य लच्छन सही ।
गुन पर्यय युत द्रव्य आदि जिन ने कही ॥
यह पूरव उतपाद माँहि व्याख्यान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥
ॐ ह्रीं उत्पादपूर्व—श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ १९ ॥

३६

सुनय-कुनय का ज्ञान द्वितिय में सार है।
द्रव्य क्षेत्र शुभ काल भाव आधार है॥
अग्रायन में उचित वहाँ व्याख्यान है।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है॥
ॐ ह्रीं आग्रायणी पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीपि स्वाहा॥ २०॥

आतम वीरज जान काल वीरज सही।
वीरज भाव अपार वीर्य तप को कही॥
सुन्दर वीर्य-प्रवाहि माँहि यह ज्ञान है।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है॥
ॐ ह्रीं वीर्यानुवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ २१॥

वस्तु माँहि जब सप्तभङ्ग जिन ने कहे।
परवादिन के निखिल दोष तब ही दहे॥
अस्ति नास्ति शुभ पूर्व माँहि यह ज्ञान है।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है॥
ॐ ह्रीं अस्ति—नास्ति पूर्व-श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ २२॥

आठ ज्ञान फल विषय नाम बरनत सही ।
और अवान्तर भेद ज्ञान के सब कही ॥
ज्ञान प्रवाद सुपूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक ज्ञान जजों थुति आन हैं ॥

ॐ ह्रीं ज्ञान प्रवाद पूर्व-श्रुतज्ञानाय अर्घम् निवपामीति स्वाहा ॥ ॥ २३ ॥

सत्य वचन माहात्म्य सत्य के भेद जी ।
सत्य वचन सुखकार करत जग छेद जी ॥
सत्य-प्रवाद सुपूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं सत्य-प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निवपामीति स्वाहा ॥ २४ ।

निश्चय आतम भेद-भेद व्यवहार है ।
नंत चतुष्टय धार जगत सुखकार है ॥
आतम प्रवाद सुपूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं आतम-प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अघम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २५ ॥

कर्म भेद तिन नाम बंध रचना कही ।
उदय-उदीरणा आदि द्वार तिनके सही ॥
कर्म-प्रवाद सुपूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं कर्म-प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २६ ॥

सुमति-गुप्ति सुखकार-चरित्र प्रकार है ।
पापत्याग विधि और महातप सार है ॥
प्रत्याख्यान सुपूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २७ ॥

विद्या-साधन-मंत्र-यंत्र तप जानिये ।
विद्या बल फल आदि और विधि मानिये ॥
विद्यानुवाद शुभ पूर्व माँहि यह ज्ञान है ।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं विद्यानुवाद पूर्व-श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २८ ॥

जिन कल्यानक उत्सव की रचना सही।

गगन-गमन सुविचार आदि महिमा कही ॥

कल्याणवाद शुभ पूर्व मांहि यह ज्ञान है।

सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं कल्याणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ २९ ॥

ज्योतिष-वैद्यक-मंत्र-तंत्र-जंतर बने।

इनके साधन कला और महिमा भने ॥

प्राणवाद शुभ पूर्व मांहि यह ज्ञान है।

सो श्रुति सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं प्राणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामिती स्वाहा ॥ ३० ॥

अलंकार-संगीत-छन्द-रस जानिये।

चौसठ तिय की कला नृत्य-विधि मानिये ॥

क्रिया-विशाल सुपूर्व मांहि यह ज्ञान है।

सो श्रुत सम्यक् ज्ञान जजों थुति आन है ॥

ॐ ह्रीं क्रिया-विशाल पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३१ ॥

तीन लोक का कथन मोक्ष साधन कहा।
गणित शास्त्र के सूत्र-प्रयोगादिक लहा॥
त्रैलोक्य बिन्दु शुभ पूर्व मांहि यह ज्ञान है।
सो श्रुत सम्यक ज्ञान जजों थुति आन है॥
ॐ ह्रीं त्रिलोक-बिन्दु पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३२॥

जोगी रासा

समता भाव सकल जीवन तें तप-संजम अति भावें।
आर्त रौद्र-द्वय ध्यान निवारे धर्म सुकल उर लावे॥
ऐसो कथन चले तिस माँही सो सामायिक जानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच आनो॥
ॐ ह्रीं सामायिक अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३३॥

चौबीसों जिन स्तवन है जामें कल्याणक विधि गाई।
गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-मोक्ष की अनुपम छटा दिखाई॥

४४

चतुर्विंशति स्तवनन मांहि सकल रीति भवि जानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजों मन-वच-आनो॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवन अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३४॥

जिन-प्रतिमा-जिन नाम लीजिये भक्ति बहुत मन लाई।
एक तीर्थंकर को सिर-नावन हाथ जोरि करि भाई॥
वंदन अंग है नाम तासको तामें या-विधि जानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच आनो॥
ॐ ह्रीं वंदना-अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३५॥

जो परमाद थकी अघ उपजे तिनके मेटन काजे।
गुरू भाषित जो-जो विधि कीजे पाप हरन को साजे॥
सो प्रतिक्रमण अंग है तामें सब रचना भवि जानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजों मन-वच-आनो॥
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमण-अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३६॥

देव जिनेश्वर को या विधि ते विनय कीजिये भाई ।
गुरु—धर्म को इस-विधि कीजे विनय-भाव मन लाई ॥
इत्यादिक है विनय अंग में अधिक विनय व्याख्यानो ।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं विनय अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३७ ॥

पंच परम गुरु की थुति कीजे सो विधि या अंग माँहि ।
नमस्कार किस विधि ते करनो किस विधि शीस नमाई ॥
इत्यादिक जे नमस्कार की विविध-क्रियो शुभ जानो ।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं नमस्कार अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३८ ॥

मुनि-इम-भोजन पानी लेवे—इम चाले इमि सोवे ।
इमि मित-वचन कहे मुनि मुख तें दोसे अघ-मल-धोवे ॥
मुनि आचार सुनो तिस माँहि दशवैकालिक मानो ।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं दश-वैकालिक अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निवपामीति स्वाहा ॥ ३९ ॥

बीस दोय मुनि सहै परिषह तिन फल सकल बताये।
सो उपसर्ग सहै मुनि नित ही नाँहि कभी घबराये ॥
उत्तराध्ययन महा अंग माँहि सकल शुभाशुभ ज्ञानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं उत्तराध्ययन-अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४० ॥

यह आचार मुनीश्वर योगा यह योगा मुनि नाँहि।
ले अयोग्य आचार कभी तो दंडयोग मुनि पांहि ॥
कल्प व्यवहार सु अंग माँहि या कही सकल चित आनो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं कल्प व्यवहार अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४१ ॥

मुनि की किरिया द्रव्य-क्षेत्र पुनि, काल भाव इमि जोगा।
सो ही विधि योगीश्वर ठाने उपजे आतम भोगा ॥
कल्पाकल्प-प्रकीर्ण अंग में ऐसी कथा सुजानो।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं कल्पाकल्प व्यवहार अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४२ ॥

जिन-कल्पी इस विधि को ठाने, स्थविर-कल्प इमि जाने ।
और बड़े नर होय तिनो की किरिया सकल बखाने ॥
अंग प्रकीर्णक महाकल्प में और विविध-विधि जानो ।
या अङ्ग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच आनो ॥
ॐ ह्रीं महाकल्प अङ्ग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामिती स्वाहा ॥ ४३ ॥

किस-किस विधि तें देव ऊपजे चार प्रकार-सु भाई ।
जे-जे तप ओ ध्यान आचरे तिस फल ते कित जाई ॥
पुँडरीक अंग माँहि कह्यो सब कथन जीव सुख दानो ।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजों मन-वच आनो ॥
ॐ ह्रीं पुण्डरीक अङ्ग श्रुतज्ञानाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४४ ॥

किस तप ध्यान थकी मुनि उपजें अहमिन्द्र थल जाई ।
किस तप तें उपजें इन्द्रादिक ध्यान कौन ते भाई ॥
महा पुँडरिक अंग के माँहि इत्यादिक विधि जानो ।
या अंग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं महा पुंडरीक अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४५ ॥

जे-जे अघ परमाद के कारण-होय मुनिन के भाई ।
ते-ते पाप मिले जो विधि तें सो-सो सकल बताई ॥
अङ्ग निषिद्धिका नाम तास को ज्ञानागार बखानो ।
या अङ्ग को मैं लेय अर्घ करि पूजो मन-वच-आनो ॥
ॐ ह्रीं निषिद्धिका अंग श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४६ ॥

गीता छन्द

निमित ज्ञान को जानते ही भाव-मिथ्या ना रहे ।
सन्ध्या समय के चिन्ह और अनेक बातन को कहे ॥
यह भलो ज्ञान अनूप फलदा होय सम्यक् सहित जी ।
सो जजो मन-वच-काय सेती अर्घ युत श्रुति कहतजी ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४७ ॥
आकाश में रवि-चन्द्र तारा मेघ पटलादिक सही ।
शुभ होंयगे वा अशुभ आदि अनेक बातन को कही ॥

४६

निःस्वार्थ होकर कहे जग को निमित-ज्ञानी जानिये।
सो—अन्तरीक सुज्ञान पूजों शुद्ध मन-वच आनिये॥
ॐ ह्रीं अन्तरीक निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ४८॥
भूमि-माँहि सुरत्न मणि की विविध—खान बखानिये।
इन आदि लेकर और बातें सकल-जग परमानिये॥
अवलोकि चिन्ह समस्त भू—के निमित ज्ञानी सब कहे।
सो भौम निमित सुज्ञान पूजों जासतें जग सुख लहे॥
ॐ ह्रीं भौम निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ४६॥
मनुज तिर्यक् देह के शुभ अशुभ चिन्ह सुजानिये।
रस—प्रकृति और सुचिह्न लखि के देह—फल परमानिये॥
अंग निमित सुज्ञान से मुनि सकल तन के फल कहे।
जजें-जो-जन भाव सेती सकल अघ पातक दहें॥
ॐ ह्रीं अंग निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५०॥
सुन शब्द नर तिर्यंच केरो शुभ-अशुभ जाने सही।
स्वर—शब्द थू-थू काल—सारस स्याल की धुनि को कही॥

५०

इन आदि लेकर और सब के वचन सुन तत्काल ही।
स्वर निमित ज्ञानी सब कहे सुनि पाप–पुँज प्रजाल हो॥
ॐ ह्रीं स्वर निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५१॥
जे मसा-तिल गाल दाढी पाँव कर में जोय हैं।
तिस निमित ज्ञान सु सकल जाने शुभाशुभ जे होय हैं॥
यह ज्ञान व्यञ्जन–निमित जिय को भलो नेत्र सु सार है।
मैं जजों सम्यक् ज्ञान श्रुत यह अर्घ मन-वच-धार है॥
ॐ ह्रीं सम्यक् व्यंजन निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम निर्वपामीति स्वाहा॥ ५२॥
तन माँहि स्वस्तिक चिन्ह–रेखा कलश–वज्रादिक सही।
सब होय लच्छन देख इनको शुभा-शुभ भापै सही॥
यह ज्ञान लक्षण निमित भाख्यो भले फल को दाय है।
मैं जजों यह श्रुत ज्ञान सम्यक् अर्घ तें सुख पाय है॥
ॐ ह्रीं लक्षण निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५३॥
शीस करके उर पगों के जानि यत भूपण महा।
तिन छेद का सब शब्द सुनकर सकल वातन को कहा॥

यह छिन्न निमित सुज्ञान जग में भले फल को दाय है।
मैं अर्घ लेय जजों सदा ही सकल दुख विनशाय है ॥
ॐ ह्रीं छिन्न-निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५४ ॥
जो लखे सपना शुभाशुभ को भेद सुख दुख जान है।
इन आदि अंग अनेक समझे सकल भेद जु आन है ॥
यह ज्ञान स्वप्न सुनिमित नीको वड़ो अतिशय कारजी।
सो जजों सम्यक् सहित श्रुत यह अखिल सुख करतारजी ॥
ॐ ह्रीं स्वप्न निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५५ ॥

चाल-जोगीरासा

ए ही आठों निमितज्ञान जो जग को अचरज कारी।
तिनको देखि भरम सव जावें और घने गुण धारी ॥
सम्यक् जुत यह ज्ञान महान जु तिनको मुनि अवगाहै।
ऐसो लखि के मन मेरा यह अर्घ-जजन हुलसाहै ॥
ॐ ह्रीं सम्यक् निमित्त श्रुतज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५६ ॥

लोक असंख्या क्षेत्र सुजाने काल असंख्या भाई।
द्रव्य लखै परमाणु अन्त लों विमल भाव अधिकाई॥
सर्वावधि यह ज्ञान महान सुमुनि बिन और न पावें।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हूँ भवदधि पार लगावें॥

ॐ ह्रीं सर्वावधि ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५७॥

लोक असंख्या क्षेत्र जु जाने वर्ष असंख्या कालो।
कारमान हूँ सूक्षम सु जोवें द्रव्य अपेक्षा वालो॥
परमावधि यह ज्ञान महान जु संख्या ते लघु पावें।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हूँ भवदधि पार लगावें॥

ॐ ह्रीं परमावधि ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५८॥

सर्व लोक के क्षेत्र की जाने काल पल्य परमानो।
द्रव्य अपेक्षा कारमान तन भाव यथाव्रत जानो॥
देशावधि यह ज्ञान महान जु साधारण कहलावें।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावें॥

ॐ ह्रीं देशावधि ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा॥ ५९॥

५३

अवधि ज्ञान हियमान होय है ताका यह शुभ भावा।
उपजें तब ते घटें निरन्तर अंश सकल निरदावा ॥
याका अंश बढ़े नहिं कबहूँ जिनवाणी इम गावे।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावे ॥

ॐ ह्रीं हीयमान अवधिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६० ॥

अवधिज्ञान जो वर्द्धमान भी उर उपजे सुखदाई।
वृद्धि निरन्तर पाय तभी तें मुनि-जन-मन हरषाई ॥
वर्द्धमान यह अवधि ज्ञान है सम्यक् युत मुनि पावें।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हूं भवदधि पार लगावें।

ॐ ह्रीं वर्धमान अवधिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६१ ॥

तब तिस चेत्रन में उर उपजे अवधि-ज्ञान सुखदाई।
तिसही स्थानक में स्थिति जाकी और चेत्र नहिं जाई ॥
अनुगामी यह अवधि ज्ञान है पर भव संग न जावें।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावें ॥

ॐ ह्रीं अनुगामी अवधिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६२ ॥

उपजे जिस भव में उर आई अवधि ज्ञान सुखकारो ।
आयुस लों यह संग रहै फिर पर भव में ह्वै लारो ॥
अनुगामी यह अवधि-ज्ञान है सकल दुःख विनशावें ।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावें ॥
ॐ ह्रीं अनुगामी अवधिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६३ ॥

जब ते ज्ञान अवधि उर उपजे तब ही ते सुन भाई ।
आयुस लों नहीं घटे-बधे अरु ज्यों का त्यों ठहराई ॥
ज्ञान अवधि यह ज्ञान अवस्थित सम्यक् युत मुनि पावें ।
तातें मैं यह ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावें ।
ॐ ह्रीं अननुगामी अवधिज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६४ ॥

विपुलमती मनपर्यय ज्ञानी पर के मन की पावें ।
सरल तथा जो कुटिल होय वह सब ही भेद लखावें ॥
क्षेत्र अपेक्षा द्वीप अढाई काल असंख्या जानो ।
इमि विकल्प जो ज्ञान लखावें सो है पूज्य महानो ॥
ॐ ह्रीं विपुलमती मनः पर्यय ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६५ ॥

सरल भाव मन विकलप जाने कुटिल भाव कि न जाने ।
नव-वसु योजन क्षेत्र अपेक्षा काल आठ भव आने ॥
मनपर्यय है ऋजूज्ञान यह *भवदधि पार करानो ।
सरल तथा त्रिकलप जो जाने सो है पूज्य महानो ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमति मनः पर्यय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६६ ॥

लोक अनन्ता काल अनन्ता द्रव्य अनन्त महा है ।
हस्त रेखवत् जो सब जाने केवल ज्ञान कहा है ॥
महिमा उसकी अगम वखानी हम—से कहत न आवे ।
तातें केवल ज्ञान जजत हों भवदधि पार लगावे ॥

ॐ ह्रीं केवल ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६७ ॥

महार्घः—

ऐसे मति श्रुत अवधि ज्ञान लखि मन पर्यय सुखदाई ।
केवल ज्ञान अनादि अपारा गुन पर्याय लखाई ॥

या–विधि पाँचों ज्ञान सु सम्यक् पूज्य कहैं जिनवानी।
तातें अर्घ बनाय जजत हों पर–भव शिवसुख दानी॥
ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६८॥

अथ जयमाला

दोहा:—

ज्ञान–भानु से विश्व के, सकल पदारथ जान।
मन वच तन–सों पूजि हों आय बसो उर ज्ञान ! ॥

चाल-मुनियानन्द:—

ज्ञान की आन सब लोक परमानजी। ज्ञान हीं ते लखे दया और दान जी॥
ज्ञान पुन्य–पाप को सबै बतलाय है। ज्ञान इम जजो उर बसो हम आय है॥

ज्ञान तें होय शिव–स्वर्ग स्थानक सही। ज्ञान तें सर्व पातक विनासै सही।
ज्ञान ही कर्म को मूल से ढाय है। ज्ञान इम जजो उर बसो हम आय है॥
ज्ञान ही जगत के दुःख विनशाय है। ज्ञान ही ते सदा जीव शिव पाय है।
ज्ञान ही जगत का गुरु समुझाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥
ज्ञान तें वरत–तप ध्यान शुभ होय जी। ज्ञान ही सकल उर भरम को खोयजी।
ज्ञान अघ मैल को धोय शुद्ध थाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥
ज्ञान तें विश्व के तत्व सब जानिये। ज्ञान ही कर्म–जंजाल को हानिये।
ज्ञान सर स्नान से पाप नशि जाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥
ज्ञान संसार से पार करतार है। ज्ञान ही जीव का एक आधार है।
ज्ञान–गज कर्म–वन नाश करवाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥
ज्ञान हीं अखिल सुख–शांति का द्वार है। ज्ञान विन तप और व्रत बेकार है।
ज्ञान रवि होय जब मिथ्या-तम जाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥
ज्ञान–पीयूष तें अमरता मानिये। ज्ञान से निज और पर पहचानिये।
ज्ञान हीं जीव को शुभ शर्ण दाय है। ज्ञान इम जजों उर वसो हम आय है॥

५८

ज्ञान तें सहज ही कर्म–अरि जारिये। ज्ञान से ध्यान की सफलता जानिये।
ज्ञान बिन क्रिया सब शून्य कहलाय है। ज्ञान इम जजों उर बसो हम आय है ॥
ज्ञान मति भेद सत तीन छत्तीस जी। ज्ञान श्रुत पूर्व–अंग आदि के ईश जी।
अवधि के भेद तीन और बहु भाय है। ज्ञान इम जजों उर बसो हम आय है ॥
ज्ञान मन पर्यय के भेद दोय जानिये। ज्ञान बस! केवला एक ही मानिये।
ज्ञान ही मनुज-जन्म सफल करवाय है। ज्ञान इम जजों उर बसो हम आय है ॥

दोहा :—

ज्ञानामृत के पान ते, बिनसे मिथ्या काम।
तातें सम्यक् ज्ञान को, भवि-जन करो प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं सम्यक् ज्ञानाय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा :—

ज्ञान-भानु की किरण-तें, चहुँदिशि होत प्रकाश।
यातें भविजन पूजिये—करिये आत्म—विकाश ॥

इत्याशीर्वादः

इति सम्यक्ज्ञान पूजा

अथ चारित्र-पूजा

स्थापना

॥ अडिल्ल छन्द ॥

पंच महाव्रत सार सुमति पांचो सही ।
गुप्ति तीन मिलि तेरह-विधि जिन ने कही ॥
यह शुभ-चारित्र भवोदधि नाव है ।
सो मैं पूजों थापि इहाँ करि चाव है ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक्-चारित्र ? अत्रअवतरअवतर संवौषट् आह्वाननं ।
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक्-चारित्र ? अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः संस्थापनं ।
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक्-चारित्र ? अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधि करणं ।

६०

अष्टक

।। जोगीरासा–छन्द ।।

नीर निरमलो चीरोदधि को त्रस जीवन विन जानो ।
उज्वल जान मनोज्ञ गंधयुत देखत ही हरपानो ।।
कनक सु झारी में भर ल्यायो भक्ति-धार सुखदाई ।
पुजों सम्यक्-चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ।।

ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक्चारित्राय जन्म-जरा मृत्यु विनाशनाय जलं ।। १ ।।

बावन-चंदन-अगर मिलाई निरमल नीर घसायो ।
ताकी गन्ध तनी वस अलिगण चहुँ दिशि तें उड़ि आयो ।।
ऐसो चन्दन गन्ध सहित हों कनक-पात्र वसि ल्याई ।
पूजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अङ्ग सब नाई ।।

ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक् चारित्राय भवाताप विनाशनाय चन्दनं ।। २ ।।

अच्त उज्वल मुक्ताफल सम खंड विना लखि ल्यायो ।
गन्ध-घनी के धार भले हैं, सो मन अति हरपायो ।।

ऐसे अक्षत थार भरे हम भक्ति धार उर लाई।
पूजों सम्यक्-चारित मन वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक् चारित्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् ॥ ३ ॥
फूल मनोहर अति सुखदाई नाना विधि के ल्यायो।
चम्पा और गुलाब चमेली जूहि के थाल भरायो ॥
तिन फूलन की माल बनाई भक्ति घनी मन लाई।
पूजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक् चारित्राय काम बाण विध्वंसनाय पुष्पं ॥ ४ ॥
नाना रस मिलवाय बनाये चरू अति ही सुखकारी।
मोदक आदि मनोहर लायो क्षुधा-निवारण हारी ॥
स्वर्ण-थाल में रखि के नीके सोहत अति सुखदाई।
पूजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक् चारित्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥
दीपक रतनमयी कर ल्यायो दिव्य-ज्योति को धारी।
थाल कनक भर निज कर ल्यायो करन आरती भारी ॥

६२

मन वच तन शुभ लाय आपने भक्ति हिये बहु लाई।
पूजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक् चारित्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥
अगर तगर कृष्णागुरु चन्दन सब की धूप बनाई।
कर्म-काष्ठ के जारन कारन तुम ढिग भेट धराई ॥
स्वर्ण-धुपायन मांहि खेय हों अति ही हिय हुलसाई।
पजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक् चारित्राय अष्ट कर्म दहनाय धूपं ॥ ७ ॥
श्रीफल लोंग बदाम सुपारी एला केला लायो।
और अनेक भले फल करले आयो मन हरषायो ॥
मोक्ष मिलन के कारण स्वामी तुम ढिग भेंट चढ़ाई।
पूजों सम्यक् चारित मन-वच-काय अंग सब नाई ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक् चारित्राय मोक्ष फल प्राप्तये फलं ॥ ८ ॥
जल चंदन शुभ अक्षत लेकर पुष्प मनोज्ञ मिलाये।
दीप धूप नैवेद्य फलन तें कंचन थार भराये ॥

ऐसो अर्घ बनाय मनोहर नाना विधि गुण गाई।
पूजों सम्यक् चारित मन वच काय अंग सब नाई॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश-प्रकार सम्यक् चारित्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

अर्घावली

जोगीरासा-छन्द

मन से हिंसा-भाव निवारे करुणायुत मन धारी।
महाव्रत तब होत अहिंसा मन राखे हितकारी॥
मुनि-किरिया-निधि सब जग बन्धू मनतें दोष न भाषे।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाषे॥
ॐ ह्रीं मानसिक हिंसा रहित अहिंसा-व्रत-सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १ ॥
जिन आज्ञायुत मुनि वच बोले सुन सब जिय सुख पावे।
हिंसा वचन नहीं अपि भाषै करुणा मन अति लावें॥

वरत अहिंसा तब शुध होवे वचन आप वश राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं वचनँ-हिंसा-रहित-अहिंसा व्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २ ॥

पीछि-कमंडलु-पुस्तक निज तन जोवे धरे उठावे ।
दयाभाव सब जीवन ऊपर तातें यह विधि भावे ॥
व्रत अहिंसा तब शुध होवे काय आप बस राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं काय हिंसा रहित-अहिंसा व्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ३ ॥

जीव दया के हेतु महा मुनि भोजन देख रखावे ।
समता सागर सब जिय बन्धू खान-पान शुध पावे ॥
व्रत अहिंसा तब शुध होवे जीव दया मन राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं एषणा सहित, अहिंसा व्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४ ॥

षट् कायिक जीवन के स्वामी मारग देखर चाले ।
सूक्ष्म जीव बादर पर करुणा चार हाथ लखि हाले ॥

६५

ब्रत अहिंसा तब शुध होवे जिन वाणी इमि भाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं ईर्या समिति युत अहिंसा महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५ ॥

प्रथम महाव्रत जान अहिंसा सो या विधि समझावो ।
पाँच भावना ताकी ऐसी इन युत शुध समभावो ॥
ब्रत अहिंसा तब शुध होवे जिन वाणी इमि भाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं पंच विधि भावना युत अहिंसा महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥६॥

क्रोध सहित बच असत कहावें ता परतीत न कोई ।
तातें क्रोध बिना समभावा वयन महा शुभ होई ॥
ऐसे सत्य महाव्रत धारी जग गुरूनाथ सुभाषे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों करि अभिलाषे ॥

ॐ ह्रीं क्रोध-रहित सत्य-महाव्रत सहिताय सम्यक्-चारित्राय अर्घम् ॥७॥

लोभ तने वश साँच न बोले ना परतीत सुभाई ।
लोभ रहित परमारथ भापे सो सत् वच सुखदाई ॥

या विधि साँच महाव्रत उत्तम भवदधि कूलत राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥
ॐ ह्रीं क्रोध रहित सत्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घ्यं ॥८॥
भयजुत आतम साँच न बोले कहे झूठ अकुलाई ।
झूठ कहे सब साँच नशत है यह निश्चय लख भाई ॥
तातें सत्य महाव्रत सोई श्री जिनवर इमि भाखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥
ॐ ह्रीं भय रहित सत्य-महाव्रत सहिताय-सम्यक् चारित्राय अर्घ्यं ॥९॥
हास्य विषे जो मुख से निकले वचन हास्य दुखदाई ।
हास्य वचन सब सत्य नशावत निश्चय जानों भाई ॥
तातें सत्य महाव्रत सोई श्री जिन वर इमि भाखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥
ॐ ह्रीं हास्य रहित सत्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घ्यं ॥ १० ॥
इत के उत उत के इत बोलें झूठ दूत वच जानो ।
ऐसो वचन कहे नहिं कब हूं सत्य व्रत शुभ मानो ॥

दूत बचन से रहित बचन सो साँच महाव्रत भाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं दूत वचन रहित-सत्य-महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११ ॥

पाँच भावना सत्य सुव्रत की इनि युत साँचे बैना ।
सत्य महाव्रत सहित भावना पाप हरे सुखदैना ॥
ऐसो सत्य महाव्रत जानो श्री जिनवर इमि भाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥

ॐ ह्रीं पंच भावना सहित सत्य-महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १२ ॥

शून्य भवन में नाहीं जावे जो चोरी को त्यागे ।
भूमि पड़ी बिसरी पर वस्तू ले नहिं कर अनुरागे ॥
ये ही अचौर्य महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं शून्य-ग्रह वास रहित अचौर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१३॥

उजड़े घर में वास करे मुनि चोरी दोप लगावें ।
तातें छाँड़ गया घर मांहि मुनि नहिं ध्यान धरावें ॥

६८

यही अचौर्य महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखें।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें॥

ॐ ह्रीं ऊजड-ग्रह वास रहित अचौर्य महाव्रत सहित-सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥१४॥

पर की वस्तु धरे इत की उत सो अघ चोरी पावें।
नांहि कभी पर वस्तु उठावे, निज परतीत बढ़ावें॥
येही अचौर्य महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखे।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें॥

ॐ ह्रीं अस्त-व्यस्त निहित परवस्तु उठावन दोष रहित-अचौर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १५ ॥

दाता दे सो भोजन ले मुनि आप न सैन बतावे।
देय समस्या भोजन ले तो चोरी दूषन आवे॥
येही अचौर्य महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखे।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे॥

ॐ ह्रीं संकेत भोजन रहित अचौर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १६ ॥

आप समान धरम है जाको सो साधरमी भाई ।
तिनतें ईर्षा भाव करे नहिं जिन वाणी इमि गाई ॥
ये ही अचौर्य महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखे ।
या जुत सम्यक चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं साधर्मी संवाद दोष रहित-अचौर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१७॥

पाँच भावना ऐसी इन-युत निर्मल व्रत्त कहावे ।
चोरी दोष लगे जा-जा में सो नहीं निमित मिलावे ॥
ये ही अचौय महाव्रत जानो भवदधि डूबत राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं पंच भावना सहित अचौर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१८॥

राग-भाव कर नारि कथा सुन जो मन में सुख पावै ।
ताको शील लहै दूपण।को या बिन व्रत न कहावै ॥
ऐसो दूपण रहित महाव्रत ब्रह्मचर्य शुभ भाखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥

ॐ ह्रीं राग कथा श्रवण दोप रहित ब्रह्मचर्य महाव्रत सहिताय सम्यक्चारित्राय अर्घम् ॥ १९ ॥

७०

नारी तन अति सुन्दर देखें बार बार धरि रागे ।
ताके शील महाव्रत को यह भारी औगुण लागे ॥
ऐसो दूपण रहित महाव्रत भवदधि डूवत राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं शरीर-निरीक्षण दोप रहित ब्रह्मचर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २० ॥

मुनिपद पहिले राज समय में भोग किये थे भारी ।
तिन अब याद किये से दूपण शील लहें अघ कारी ॥
तातें पूरब भोग न चिन्तें शील आप दृढ़ राखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं पूर्व-भोग-चिन्तन दोप रहित ब्रह्मचर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ।२१।

भोजन पुष्टीकर नहीं लेवें शील रखन के काजें ।
पुष्टीकर भोजन खाये सों शील महाव्रत लाजें ॥

तातें ऐसो भोजन तजिके शील महाव्रत राखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥
ॐ ह्रीं गरिष्ठ भोजन दूषण रहित ब्रह्मचर्य महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥२२॥
अपने तन का मुनिवर मंडन नाहिं कभी करवावें ।
ऐसी क्रिरिया यदि मुनि ल्यावें शील दोष तब पावें ॥
तातें तन शृंगार रहित जो शील महाव्रत राखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥
ॐ ह्रीं स्वशरीर संस्कार दोष रहित ब्रह्मचर्य महाव्रत सहितायसम्यक् चारित्राय अर्घं ॥२३॥
पाँच भावना ऐसो पालें शुद्ध शील के काजें ।
ताके मोक्ष मनोहर रानी सकल साज सुख साजें ॥
ऐसौ शील महाव्रत नीको जो मुनि दृढ़कर राखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥
ॐ ह्रीं पंच भावना युत शील महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २४ ॥
कोमल-कठिन-विषय सपरस के शीत उष्ण फिर जानो ।
हलका भारी रूखा चिकना तन सपरस सुख दानो ॥

ऐसो आठ विपय को त्यागी परिग्रह त्याग सुभाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं स्पर्शन-इन्द्रिय शुभाशुभ विपय रहित परिग्रह त्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २५ ॥

खाटा मीठा कडुआ जानो और कपायल भाई ।
फेरि चर्परा आदि विपय में रसना बहु लपटाई ॥
यह रसना के भोग शुभाशुभ त्याग परिग्रह भाखें ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें ॥

ॐ ह्रीं रसना इन्द्रिय शुभाशुभ विपय रहित परिग्रह त्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २६ ॥

नासिक इन्द्रिय भोग शुभाशुभ त्याग परिग्रह सोई ।
गंध विपै लपटाय जीव यह सकल सार सुख खोई ॥

तातें इनको त्याग भये सो नगन रूप शुभ भाखें।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखें॥

ॐ ह्रीं नासिका इन्द्रिय शुभाशुभ विषय रहित परिग्रह त्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २७ ॥

नैना जाने लाल पीत फिर श्याम-सब्ज अरु धोले।
तिनमें राग-रू द्वेष निवारे त्याग परिग्रह भोले॥
इनको त्याग परिग्रह त्यागे सो–ही शिवफल चाखे।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे॥

ॐ ह्रीं चत्तु इन्द्रिय-शुभा-शुभ विषय रहित परिग्रहत्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २८ ॥

कर्णेन्द्रिय के विषय सुजानो सचित-अचित दुखदाई।
इनमें राग-रू द्वेष करे जो सोई जग उलझाई॥
तातें इनको त्याग सुजानो त्याग महाव्रत राखे।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे॥

ॐ ह्रीं श्रोत्र इन्द्रिय शुभाशुभ विषय रहित परिग्रह-त्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ २९ ॥

७४

पाँच भावना ऐसी जानो त्याग महाव्रत भाई ।
इन युत परिग्रह त्याग महाव्रत सकल जीव सुखदाई ॥
तातें इनकी भावन भावे वोही शिवफल चाखे ।
या जुत सम्यक् चारित सोई पूजों कर अभिलाखे ॥

ॐ ह्रीं पंच भावना युत परिग्रह त्याग महाव्रत सहिताय सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥३०॥

अडिल्ल—छन्द

चार हाथ भू जोय पाँव मुनिवर धरे ।
इत-उत देखन त्याग काय निज वश करे ॥
सो सुध ईर्या समिति महा सुखदाय है ।
या जुत चारित जजों विमल सिरनाय है ॥

ॐ ह्रीं इत-उत अवकोलन दोप रहित ईर्या समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥३१॥

तब मुनि करे विहार दयानिधि सार जी ।
चाले नाँहि सिताब बड़े पग धार जी ॥

७५

ऐसो दोप निवार समिति सुध-ल्याय है।
या जुत चारित जजों विमल सिरनाय है॥
ॐ ह्रीं शीघ्र-गमन दोप रहित ईर्या समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ३२ ॥

राग वचन सुन मुनी राह चलते सही।
राग-द्वेप करि चंचल-चित करि हैं नहीं॥
तब ही ईर्या समिति शुद्ध फलदाय है।
या जुत चारित जजों विमल सिरनाय है॥
ॐ ह्रीं गमन-समय चंचल चित दोप रहित ईर्या समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ३३ ॥

राह चलत मुनि वचन दुष्ट सुनि के सही।
दोप भाव करि चित्त चलाचल ना कही॥
तब शुभ ईर्या समिति होत हितदायजी।
या जुत चारित जजों विमल सिरनायजी॥
ॐ ह्रीं मार्ग-दुष्ट-वचन सुन दोप चित रहित ईर्या समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ३४ ॥

राह चलत मुनि कवहूँ इमि चित में धरें।
पड़ी वस्तु पग कर तें कवहूँ ले धरे॥
सो यह दोष निवार समिति सुध लाय हैं।
या जुत चारित जजों त्रिमल सिर नाय है॥

ॐ ह्रीं मार्ग-पतित-वस्तु ग्रहन दोप-रहित ईर्या समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ३५॥

सर्व दोप तें रहित मुनी मग जायजी।
जूडा के परमाण भूमि दिखवाय जी॥
ऐसी सुमति दयाल भाव कर लाय हैं।
या जुत चारित जजों त्रिमल सिरनाय हैं॥

ॐ ह्रीं सर्व दोष रहित-ईर्या-समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ३६॥

जा-जा-देश-मँझार वस्तु जो नाम है।
सोई करनो साँच वचन शुभ धाम है॥
जनपद सत यह जान सदा सुखदाय है।
या जुत चारित जजों विमल सिरनाय है॥

ॐ ह्रीं जन पद सत्य-वचन भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ३७॥

रूढक जाको नाम सकल जन जिमि कहे ।
सोई संवृत सत्य महा मुनिवर चहे ॥
भाषा समिति मंझार इसे भवि जानिये ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिये ॥

ॐ ह्रीं संवृत–सत्य वचन भाषा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ३८ ॥

विविध जन्तु के चित्र मनोहर कीजिए ।
फिर तिन को नर पशू नाम कह लीजिए ॥
यह स्थापना सत्य सुखद भवि मानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं स्थापना सत्य वचन समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥३९॥

जाको जग में नाम प्रसिद्ध सु गाईये ।
सोई कहनो नाम दोष नहिं पाईये ॥
नाम सत्य यह सार सुमति वच जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं नाम सत्य वचन भाषा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४० ॥

७८

यह नर काला पीत लाल निहचै सही ।
ये ही कहना रूप सत्य भापा कही ॥
ऐसी भापा समिति वचन मन जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं रूप सत्य वचन भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४१ ॥

यहै पदारथ बडा यहै छोटा सही ।
देय अपेक्षा घने वचन मुँह ते कही ॥
यही सत्य परतीत सुमिति वच जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं प्रतीति सत्य वचन भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥४२॥

नैगमनय की रीति वचन सो भाखिए ।
करन पडी जो वस्तु करी मन आखिए ॥
यही सत्य व्यवहार सुमति वच जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं व्यवहार सत्य भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥४३॥

देव विपै वल ऐसा भू उलटी करै ।
धरती जानि अनादि नांहि कबहूं टरै ॥
ऐसे कहना सम्भावन सत जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं सम्भावना सत्य वचन भाषा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४४ ॥

मेरू असंख्या द्वीपन के सुर-थल सही ।
कंद मूल में जीव अनन्ता जिन कही ॥
भाव सत्य सो जोय सुमति वच जानिए ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिए ॥

ॐ ह्रीं भाव सत्य वचन भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४५ ॥

जाको जिसकी उपमा देकर भापिये ।
सो ही सत्य प्रमाण वचन तें आखिये ॥
ऐसो उपमा सत्य वचन भवि जानिये ।
या जुत चारित जजों विमल हिय आनिये ॥

ॐ ह्रीं उपमा सत्य-वचन, भापा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ४६ ॥

८०

प्राण जाहु तो जाहु असत भापै नहीं।
भापै तो सति वैन जिनेश्वर धुनी सही॥
सोही भाषा समिति भव्य मन आनिए।
या जुत चारित जजों विमल हिय मानिए॥
ॐ ह्रीं भाषा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४७॥

मुनि के छियालीस दोष

उद्गम दोष १६

मुनि के निमित सु-भोजन दाता जो करे।
तो फिर दोष उद्देशक अपने सिर धरे॥
यह भोजन मुनि तजे एषणा लाय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी॥
ॐ ह्रीं उद्देशक दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४८॥
भोजन को कम जानि और तिस में करे।
अध्यवधि यह दोष दातृ निज सिर धरे॥

यह भोजन मुनि तजे एषणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥
ॐ ह्रीं अध्यवधि दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ४९ ॥

मुनि को भोजन देय सचित्त मिलाई के।
पूति कर्म यह दोष दातृ सिर गाई के ॥
यह भोजन मुनि तजें एषणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥
ॐ ह्रीं पूति-कर्म दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५० ॥

मुनि को भोजन देय असंयमी हाथ जी।
तो दाता ले मिश्र दोष निज माथ जी ॥
यह भोजन मुनि तजें एषणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥
ॐ ह्रीं मिश्र दोष रहत एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५१ ॥

पात्रान्तर में भाजन यदि दे लाई के।
सो है स्थापित दोप दातृ अधिकाई के॥
यह भोजन मुनि तजै एपणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी॥

ॐ ह्रीं स्थापित दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५२ ॥

देव-पित्र का किया मुनी को दे सही।
तो दाता वलि दोप आप सिर ले कही॥
यह भोजन मुनि तजै एपणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी॥

ॐ ह्रीं वलि दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५३ ॥

वेग वेग वा धीरे मुनि को हार दे।
प्राभित सो यह दोप दातृ सिर भार दे॥
यह भोजन मुनि तजें एपणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी॥

ॐ ह्रीं प्राभित दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५४ ॥

८३

मुनि भोजन करि गये स्थान की घिन करें ।
प्राक्किरन यह दोप पात्र निज सिर धरें ॥
यह भोजन मुनि तजें एपणा न्याय जी ।
या जुत सम्यक्-चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं प्रादुष्कार दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५५ ॥

मोल देय करि लाया भोजन दे सही ।
तो दाता सिर दोष क्रीत नित ही कही ॥
यह भोजन मुनि तजें एपणा न्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं क्रीति दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ५६ ॥

कर्जा करके मुनि को भोजन देय जी ।
सो दाता ऋण दोप आप सिर लेय जी ॥
यह भोजन मुनि तजें एषणा न्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं ऋण दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५७ ॥

निज भोजन बदलाय दान मुनि को करै ।
परावर्त यह दोष दातृ निज सिर धरै ॥
यह भोजन मुनि तजै एषणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं परावर्त दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ५८ ॥

अन्य स्थान तें लाय दान मुनि को करैं ।
अभिघट दोष महान दातृ निज सिर धरैं ॥
या भोजन मुनि तजैं एषणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं अभिघट दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ५९ ॥

बँधी वस्तु मुख खोलि दान दे ल्याय जी ।
उद्भिन्न नाम यह दोष शीस धरवाय जी ॥
यह भोजन मुनि तजें एषणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं उद्भिन्न दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६० ॥

८५

ऊपर खना की वस्तु लाय मुनि दान दे ।
माला रोहन दोप दातृ निज सिर लदे ॥
यह भोजन मुनि तजें एपणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं मालारोहण दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६१ ॥

राजादिक भय लाय दान मुनि को करे ।
दोप अछेद्य दातृ निज सिर धरे ॥
यह भोजन मुनि तजें एपणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं आछिद्य-दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ६२ ॥

जाका धनी न होय दान दे ओर जी ।
अनिसृष्टि अघ लहै दातृ तिस ठोर जी ॥
यह भोजन मुनि तजे एपणा ल्याय जी ।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी ॥

ॐ ह्रीं अनिसृष्ट दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६३ ॥

यह तो षोडश दोष मुनिन के ऽहार में।
दाता पाले जान क्रिया के द्वार में॥
मुनि हू भोजन लेय एषणा ल्याय जी।
या जुत सम्यक् चारित पूज्य सुभाय जी॥

ॐ ह्रीं षोडश प्रकार उद्गम दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥६४॥

नोट :—यह सौलह प्रकार के उद्गम-दोष दान देने वाले दातार पर ही अवलम्बित हैं। बुद्धिमान दाता कभी भी दान में इन दोषों को नही लगने देता। यदि दोष लग जाने पर मुनि को मालूम हो जाय तो मुनिराज को विना भोजन किये अथवा भोजन का त्याग करके वापिस लौट जाना चाहिये। संशोधक।

———

उत्पादन-दोष

चाल—जोगीरासा

जाय मुनी दाता के घर में बालक नाँहि खिलावें।
नहिं शृंगारे नहिं पुचकारे बालक को न रिझावें ॥
धात्रि दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं धात्री दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६५ ॥

दाता के घर जाय यतीश्वर इत उत बात कहावें।
देशान्तर की बात कहैं तो मुनिवर दोष चढ़ावें ॥
दूत दोष यह तजे मुनीश्वर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं दूत दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६६ ॥

८८

निमित ज्ञान की बात कहैं मुनि दाता को सुखदाई ।
भोजन फेर लहै घर वाके तो सिर–दोष चढ़ाई ॥
निमित दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं निमित्त दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६७ ॥

दाता के घर जाय मुनीश्वर शिल्प कला बतलावें ।
अथवा कहैं हमें यहाँ भोजन हीन–अधिक मिल जावें ॥
आजीवक यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं आजीवक दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६८ ॥

खुश करने की बात कहैं मुनि दाता को सुखदाई ।
भोजन ताके आप करैं ऋषि तो अघ लेय उपाई ॥
दोष वनीपक तजें मुनिश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं वनिपक दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ६९ ॥

८६

दाता के घर जाय ऋषीश्वर औषध भेद बतावें।
नाडी देखें—रोग बतावें—भोजन तिस घर पावें॥
दोष चिकित्सा तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥
ॐ ह्रीं चिकित्सा दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ७०॥

जो मुनि भोजन लेय क्रोध युत दाता के घर जाई।
तो मुनि के सिर दोष चढत है भव-भव को दुखदाई॥
क्रोध दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥
ॐ ह्रीं क्रोध दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ७१॥

जो मुनि भोजन ले दाता घर मान सहित हो भाई।
हम तपसी दीरघ कुलधारी-ज्ञान धरैं अधिकाई॥
मान दोष यह नाम तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥
ॐ ह्रीं मान दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ७२॥

६०

भोजन को मुनि जाय नगर में दाता के घर माँही ।
भोजन लेय कपट करि उर में नाना लोभ लगाई ॥
माया दोष तजें यह मुनिवर समित एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं माया दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ७३ ॥
जो मुनि दाता के घर भोजन लेय लोभ वश भाई ।
स्वाद लम्पटी रसना पीडित तो सिर दोष चढाई ॥
लोभ दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं लोभ दोष रहित एषणा समिति साहत सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ७४ ॥
भोजन पहिले दाता की स्तुति जो मुनिराय करावें ।
तो अपने तप-संयम को मुनि नित ही मैल चढावें ॥
पूर्व स्तुति यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं पूर्वस्तुति दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ७५ ॥

दाता के घर भोजन ले—मुनि पीछे स्तवन सुनावें ।
नाना थुति दाता की ठाने दोप आप लिपटावें ॥
पीछे थुति यह दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं पश्चात्स्तुति दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ७६ ॥

जो मुनि भोजन ले दाता घर ताहि खुशी के काजें ।
ताहि पढावें विद्या तो ऋपि दोप आपको साजें ॥
विद्या दोप लगे यह मुनिवर समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं विद्या दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ७७ ॥

मंत्र तंत्र यंत्रादिक अतिशय चमत्कार दिखलावें ।
इन करि भोजन लेय यतीश्वर तो सिर पाप ॅधावें ॥
मंत्रोत्पादन दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं मंत्रोत्पादन दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ७८ ॥

जो मुनि काजल नेत्रन को ले चूरन और बतावें।
यों करि भोजन ले दाता घर तो सिर दोष लगावें ॥
चूर्णोत्पादन दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं चूर्णोत्पादन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ७६ ॥

जो मुनि वश करने के कारण वशीकरण बतलावें।
इन अतिशय तें भोजन पावें तो संयम विनशावें ॥
मूलकर्म यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं मूलकर्म दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८० ॥

नोट :—यह सोलह उत्पादन दोष मुनियों पर अवलंबित हैं। यदि मुनिराज इन दोषों में से किसी एक को लगाकर भोजन पाते हैं-तो जैन शास्त्रानुसार वे मुनिपद से च्युत समझे जाते हैं। जैनियों का मुनि मार्ग बड़ा कठिन है।

संशोधक

एषणा दोष

चाल जोगीरासा

भोजन यह सब शुद्ध बना है अथवा सुध नहिं भाई।
इस संशय-युत भोजन ले तो मुनि सिर दोष लगाई॥
शंकित दोष तजें यह मुनिवर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥

ॐ ह्रीं शंकित दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ८१॥

दाता के कर चिकने अथवा चिकना बर्तन जोई।
तातैं भोजन यदि मुनि खावें-तो अति दूषन होई॥
भ्रक्षित दोष तजें यह मुनिवर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥

ॐ ह्रीं भ्रक्षित दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ८२॥

सचित वस्तु पे भोजन हो-तो मुनिवर कबहुँ न खावें ।
मन ललचाकर यदि ले-लेवें मुनि पदवी विनशावें ॥
निक्षिप्त-दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं निक्षिप्त दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८३ ॥

सचित वस्तुतें भोजन ढाँक्यो सो गुरु नाहीं खावें ।
ऐसो कारन आय मिले तो जीमन को तजि जावें ।
पिहित दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ॥
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं पिहित दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८४ ॥

दाता के तन तें यदि कपड़े भूतल पर लटकावें ।
चौके-पाटे ईर्यापथ से बिन देखे सरकावें ॥
व्यवहर दोष तजें मुनिनायक समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्री संव्यवहरण दोष रहित एषणा समिति सहित चारित्राय अर्घम् ॥ ८५ ॥

६५

सूतक रोगी वृद्ध बाल अरु जलती आगि बुझावें ।
गर्भवती तिय होय नपुँसक इन कर मुनि नहीं खावें ॥
दायक दोष तजें मुनिनायक समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं दायक दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८६ ॥

आँचल सों तजि बालक नारी जो मुनि को पढ़िगावें ।
तो याके कर को भोजन ऋषि आप कभी नहीं खावें ॥
दायक दोष तजें मुनिनायक समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं दायक दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८७ ॥

वस्तु अचित अरु सचित्त मिली जो भोजन में मुनि खावें ।
तो ऋषिराज लहै सिर दूषन जग में निन्दा पावें ॥
उन्मिश्रित यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं उन्मिश्र दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ८८ ॥

९६

जाके रंग में परिणत नाहीं ऐसा द्रव्य जो लाई।
भोजन में यतिवर को देवें तो लेवें नहीं भाई॥
दोष अपरिणति तजे महामुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥

ॐ ह्रीं अपरिणति दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ८९॥

पाकालय में तोला—कलई—ढकनी आदिक होई।
कढही–खिचडी लिपटी तातें मुनिवर देखें न कोई॥
लिप्त दोष यह नाम तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥

ॐ ह्रीं लिप्त दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ९०॥

निज कर तें जो वस्तु बहुत ही भूतल पर गिरजावें।
अल्प बची हो अपने कर में सो मुनि नाहीं खावें॥
परी-त्यजन यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें॥

ॐ ह्रीं परित्यजन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ ९१॥

सीली ताती वस्तु मिलाई स्वाद निमित मुनि खावे ।
तो अपनो सब संयम नीको-ताको दोष चढावे ॥
संयोजन यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं संयोजना दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६२ ॥

ग्रास बत्तीस मुनि परमानो उत्कृष्टा यह होई ।
यातें अधिक नहीं ऋषि खावे काल उलंघे न कोई ॥
अ-प्रमाण यह दोष तजे मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं अप्रमाण दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६३ ॥

मीठो भोजन रुचि सों खावें दाता को जु सरावें ।
बहु आसक्त होय ले भोजन-तो सिर दोष मँढावें ॥
दोष अंगार तजें गुरु ज्ञानी समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं अंगार दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ६४ ॥

जो भोजन मन चाहो नाँही खावत अरुचि कराहैं ।
दाता कीं निन्दा सिर ठाने तो निज संयम दाहे ॥
धूम्र दोष यह तजें महामुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं धूम्र-दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ९५ ॥

दोहा:—

ऐसे तेइस-दुगुन मल—टालत हैं मुनिराय ।
तब भोजन करि हैं सही—ते गुरु नमों सुभाय ॥
ॐ ह्रीं छियालीस दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥

बत्तीस-अन्तराय

मुनि-भोजन करते यदि नभ से काक बींट कर जावें ।
ऋषिवर तब ही भोजन छाँडै खेद हिये नहीं पावें ॥

काकवींट यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं काकवींट अंतराय रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥९६॥

पथ में मुनि के विष्टादिक जो अशुचि वस्तु लगजाई।
मुनिवर तब ही भोजन छाँड़े दोष न लेश लगाई ॥
अन्तराय अमेध्य तजें मुनि समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं अमेध्य अंतराय रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ९७ ॥

जो मुनि भोजन को मग जाते मुख ते वमन निहारें।
यतिवर तब ही भोजन छोड़ें अन्तराय उर धारें ॥
छर्दि दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं छर्दि दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ९८ ॥

मुनिवर भोजन को मग जाते तिनको रोक लगावें।
तो यतिवर तब वापिस लौटें द्वेष न उर उपजावें ॥

रोधन दोष तजें यह मुनिवर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं रोधन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ९९ ॥

निज पर का मुनि रक्त निहारें भोजन समय सु-भाई ।
जैन-मुनी तब अन्तराय करि समता चित उपजाई ॥
रुधिर दोष यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं रुधिर दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १०० ॥

अश्रुपात निज पर के देखें भोजन में मुनिराई ।
करुणा—सागर भोजन त्यागें रंच न मैल उपाई ॥
अश्रुपात यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक्-चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं अश्रुपात दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १०१ ॥

भोजन करते दाता पात्रन—जंघा नीचे छीवें ।
तो मुनिनाथ तजें सब भोजन—अनजल कबहूँ न पीवें ॥

जानू अधः यह दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं जान्वधः परामर्श दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१०२॥

जानु भाग को सीमा से जो अधिक उलंघे भाई ।
तो ऋषिवर तब भोजन छाँड़े द्वेप न उर उपजाई ॥
जानुव्यातिक्रम दोष तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ।
ॐ ह्रीं जानूपरिव्यतिक्रम दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घ म् ॥१०३॥

नाभि तले सिर करके निकले भोजन में ऋषि जोवे ।
तो अन्तराय करें जग-नायक धीर-वीर चित होवे ॥
नाभि-अधो यह दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं नाभ्यधो निगमन दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१०४॥

त्याग किया हो जिस वस्तू का भोजन विरियन आवे ।
अन्तराय तब ऋषि के होवे आकुलता नहीं लावे ॥

प्रत्याख्यान जु दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित्र पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं स्व प्रत्याख्यान दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१०५॥

जीव घात निज–पर–जन सेती भोजन बिरियाँ होई ।
तो मुनि देख तजें भोजन को दयाभाव उर जोई ॥
जन्तू-वध यह दोष तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं जीव-वध दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १०६ ॥

भोजन करते हस्त माँहि ते काक–ग्रास ले जावे ।
मुनिनायक तब भोजन छाँड़े–ता दिन फेर न खावे ॥
काक–पिंड–ग्रह दोष तजें मुनि समिति एपणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं काक पिंड ग्रहन दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१०७॥

भोजन करते ग्रास पड़े भू दात–पात्र कर–सेती ।
तब मुनिवर जीमन को छाँड़े है मरयादा एती ॥

१०३

पिंड–पतन यह दोष तजे मुनि समिति एपणा पालें ।

या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं पिंड-पतन दोप रहित-एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १०८ ॥

भोजन करते पाणि–पात्र में जीव–पतन हो आई ।

तो ऋपिराज तजें सब भोजन करुणा–भाव उपाई ॥

पाणि जन्तु–वध दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।

या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्री पाणि जन्तु वध दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १०६ ॥

भोजन बिरियाँ आमिप देखें तो ऋपि भोजन त्यागें ।

तन विरक्त संयम को लोभी समता रस मन पागें ॥

आमिप-दर्शन दोप तजें मुनि समिति एपणा पालें ।

या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं आमिप–दर्शन दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११० ॥

भोजन–बेला जगत–गुरु को होय उपद्रव आई ।

अन्तराय तब गिने महामुनि समता भाव लहाई ॥

उपसर्ग दोष–यह तजें मुनीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं उपसर्ग दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १११ ॥

भोजन करते मुनि–पद बिच में पंचेन्द्रिय निकसावें ।
वीतराग तब भोजन त्यागें खेद नहीं मन पावें ॥
पादान्तर–जिय गमन दोष तजि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं पादान्तर पंचेन्द्रिय गमन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११२ ॥

भोजन करते पात्र–हाथ से दाता के गिर जावे ।
त्रिभुवन–पति तब भोजन छाँड़े संयम नाँहि गमावे ॥
पात्र–पतन यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं पात्र–पतन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ ११३ ॥

भोजन करते अपने तन मुनि जो मल निकला जानें ।
करुणा–सागर भोजन छाँड़ें जिन–आज्ञा उर आनें ॥

दोष उचार तजें यह मुनिश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं उच्चार दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११४ ॥

मुनिके तन तें भोजन करते मूत्र-बिन्दु टपकावें ।
अन्तराय तब करें मुनीश्वर खेद नहीं चित लावें ॥
दोष प्रश्रवण तजें महामुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं प्रस्रवण दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११५ ॥

भोजन काल कभी मुनि-बिसरे शुद्रन के घर जाई ।
मुनिवर तिस दिन जीमन त्यागे अनशन व्रत कराई ॥
दोष-अभोजन-गृह-प्रवेश तजि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं अभोज्य ग्रह-प्रवेश दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११६ ॥

मूर्छा खाय पडत जिय देखे भोजन में मुनिराई ।
तब ही भोजन को परिहारे संयम भाव धराई ॥

दोष पतन यह तजें यतीश्वर समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं पतन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११७ ॥

भोजन करते कर्म-योग तें बैठ जाँय मुनिराजै ।
अन्तराय करि जीमन त्यागे सुगति साज तब साजै ॥
उपवेशन यह दोष तजें गुरु समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं उपवेशन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११८ ॥

श्वान-आदि काट्या कोउ जीवा भोजन करते जोवें ।
अन्तराय तब करें मुनीश्वर कायर चित नहीं होवें ॥
दंष्ट दोष यह तजें महामुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ।
ॐ ह्रीं दंष्ट्र-दोष सहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ ११६ ॥

भोजन—वेला सिद्ध-भक्ति में मुनि-कर शीस नवावें ।
भूमि स्पर्श हो जावे मुनि के ता—दिन अनशन लावें ॥

भूमि-स्पर्श यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक्--चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं भू-स्पर्श दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १२० ॥

श्लेपम करते भोजन विरियाँ मुनिवर देखे कोई ।
अन्तराय तब करें मुनीश्वर तिन-जिनवाणी जोई ॥
निष्ठीवन यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेर अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं निष्ठीवन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १२१ ॥

भोजन करते उदर-स्थान ते कृमि निगमन हो जावें ।
जगदीश्वर तब भोजन त्यागें खेद न मन में लावें ॥
कृमि निगमन यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥
ॐ ह्रीं कृमि निगमन दोष रहित एषणा-समिति-सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १२२ ॥

दाता के बिन-दिये सु-भोजन मुनि चाहै मन माँही ।
अंगीकार करें मुनि तन तें ता सिर दोष चढाहीं ॥

१०८

दोष अदत्त तजें मुनि नायक समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं अदत्त दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम ॥ १२३ ॥

नगर द्वार वा घर के द्वारैं मुनि को मारे कोई ।
अथवा और जीवन को मारे तो मुनि तजें रसोई ॥
दोष प्रहार तजें जग-नायक समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं शस्त्र-प्रहार दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१२४॥

भोजन को नगरी में जाते अग्नि-दाह मुनि जोवें ।
अन्तराय तब करें मुनीश्वर निज-संयम नहीं खोवें ॥
ग्रामदाह यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं ग्राम दाह दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १२५ ॥

वस्तु पडी मग पाँव थकी जो लें मुनिराय उठाई ।
जग-गुरु के तब भोजन माँही दोष लगे अधिकाई ॥

पाद-ग्रहण यह दोष तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं प्राद-ग्रहण दोप रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१२६॥

राह पडी जो वस्तु आप-कर-लें मुनिराय उठाई ।
अन्तराय तब करे मुनीश्वर लोभ न मन में लाई ॥
हस्त-ग्रहण यह दोप तजें मुनि समिति एषणा पालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं हस्त-ग्रहण दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१२७॥

तीस-दीय यह अंतराय मुनि भोजन विरियाँ टालें ।
सो मुनि संयम-रक्षक-होकर निज चारित्र संभालें ॥
समिति एपणा ताके होवे अखिल-कर्म-मल जालें ।
या जुत सम्यक् चारित पूजों सो मेरे अघ टालें ॥

ॐ ह्रीं बत्तीस अन्तराय रहित पणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१२८॥

मलदोष

॥ चोपाई ॥

भोजन में नख निकसे जोय। अंतराय गुरु के तब होय॥
समिति एषणा तब सुध जान। या जुत चारित पूज्य बखान॥
ॐ ह्रीं नख-मल दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ १२९॥

निकले रोम सु-भोजन माँहि। अंतराय तब मुनि के आँहि।
समिति एषणा तब सुध जान। या जुत चारित पूज्य बखान॥
ॐ ह्रीं रोम-मल दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ १३०॥

मृतक जीव जीमते जोय। अंतराय तब मुनि के होय।
समिति एषणा तब सुध जान। या जुत चारित पूज्य बखान॥
ॐ ह्रीं मृतक जीव अवलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ १३१।

भोजन समय अस्थि मुनि जोय। अंतराय यति पति के होय।
समिति एषणा तब सुध जान। या जुत चारित पूज्य बखान॥
ॐ ह्रीं अस्थि-अवलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम्॥ १३२॥

१११

जीमत निकले अन्न अछेद । तब मुनिवर भोजन तजि देत ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं गेहूँ आदि अन्नावयव विलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १३३ ॥

जीमत र ध नजर जो आय । तब योगी भोजन तजि जाय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं राध दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् । १३४ ॥

जीमत तिल के अंश दिखाय । तब स्वामी भोजन नहीं खाय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं तिलांशावलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १३५ ॥

भोजन करत चाम को जोय । मुनि को तब भोजन नहीं होय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं चाम-विलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १३६ ॥

जीमत मुनी रुधिर अवलोय । तब भोजन छाँडै सुधि होय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं रुधिर-दर्शन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १३७ ॥

भोजन विरियाँ आमिष जोय । मुनिवर भोजन करै न कोय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं आमिष-अवलोकन दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥१३८॥

भोजन में बीजादिक आय । यतिवर भोजन को नहीं खाय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं बीज दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १३९ ॥

भोजन में मुनि के फल आय । ऋषिवर ग्रास करें हरषाय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं फल दोष रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १४० ॥

कन्द वस्तु आदादिक आय । अंतराय मुनि के हो जाय ।
समिति एषणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं कन्द-दोष-रहित एषणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १४१ ॥

मूल वस्तु मूलादिक धरे । मुनिवर भोजन को परिहरे ।
समिति एपणा तब सुध जान । या जुत चारित पूज्य बखान ॥
ॐ ह्रीं मूल-वस्तु दोप रहित एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १४२ ॥

दोहा :—

भोजन के सब दोप यह—छोडे नित मुनिराय ।
जैन-मुनी तब होत हैं—वन्दूँ तिनके पाँय ॥
ॐ ह्रीं समस्त दोप रहित शुद्ध एपणा समिति सहित सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥ १४३ ॥

अथ जयमाला

दोहा :—

चारित ही ते मिलत है, अखिल सुखन का साज ।
चारित ही जग-पूज्य है, देत मुक्ति का राज ॥ १ ॥

वेसरी छन्द

शीलवान धरमीजन पाले । तिहूं-काल चारित्र सँभाले ।
चारित महिमा कहों मैं काकों । मैं पूजों मन वच तन ताकौं ॥ १ ॥
चारित को चक्री—बल चावें । सुर-खग-इन्द्र भावना भावें ।
चारित नीका धारत याकों । मैं पूजों मन-वच-तन ताकों ॥ २ ॥
चारित चर्म-शरीरी धारे । धरे नहीं ता—सिर अघ भारे ।
कामदेव—से धारत याकों । मैं पूजों मन वच तन ताकों ॥ ३ ॥
यह चारित जग-पी-हर भाई । धारत याकों नित मुनिराई ।
शिव के वाँछक सेवत याकों । मैं पूजों मन वच तन ताको ॥ ४ ॥
चारित नाम सुनत हरपावैं । सो जिय चारित महिमा पावें ।
चारित धारे हैं धन वाकों । मैं पूजों मन वच तन ताकों ॥ ५ ॥
चारित जगत-मीत लखि भाई । चारित-रतन सदा सुखदाई ।
मुनिजन पूजत ध्यावत याको । मैं पूजों मन वच तन ताकों ॥ ६ ॥

चारित को हम तो तरसावें। का-जाने किस भव में पावें।
इस भव करें भावना याकों। मैं पूजों मन वच तन ताकों ॥ ७ ॥

चारित का शरणा जिन पाया। तिन ने निज-भव सफल बनाया।
भव भव में शरणा हो याकों। मैं पूजों मन वच तन ताकों ॥ ८ ॥

दोहा :—

सुर-नर पूजत जास-कों—वह चारित्र महान।
सो चारित मम उर बसो—सर्व गुणन की खान ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक् चारित्राय अर्घम् ॥

दोहा :—

भविजन यह पूजा करो, भक्ति सदा उरधार।
चारित ही से होत हैं शिव लक्ष्मी—भरतार ॥

इत्याशीर्वादः

———

अथ समुच्चय आरती

दोहा :—

सम्यक्-दर्शन ज्ञान नग, चारित रतन मिलाय
तीन रतन यह तीन जग, पूजत हैं शिरनाय ॥ १ ॥

सोरठा :—

पूजों नित भवि लोय, रतन-त्रय जग सार है।
तातें सब सुख होय, कहूँ आरती—भारती ! ॥ २ ॥

मुनियानन्द की चाल :—

भुवन-त्रय मुकुट शुभ रत्नत्रय जानिये। तीन-जग-जीव थुति करहिं हित मानिये।
तास फल-पाप मल धोय निज सुध करें। मैं जजों भावतें काज वांछित सरें॥
तीन जग-भ्रम्यो बिन रत्नत्रय पाय जी। मिली नहीं सेव भी कहूं सुखदाय जी।
अबहिं शुभ दिन भयो भक्ति इनकी करें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥

देव जिनराज से—रत्नत्रय काज जी। तज्यों सब त्रिश्व-सुख भये जिनराज जी।
छाँडि सब परिग्रह वास बन में करें। मैं जजों भाव तें काज वाँछित सरें॥
रत्नत्रय बिन सब तीर्थंकर देव जी। सिद्ध पद ना—लहें करों बहु सेव जी।
तासतें रत्नत्रय एक शिव—थल करें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥
रत्नत्रय पाय भये देव गणधर सही। रत्नत्रय सेव तें मुक्ति पदवी लही।
सकल विधि सार यह रत्नत्रय अघ हरे। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥
रत्नत्रय तीर्थ सब जगत में सार जी। रत्नत्रय देय भवि तार अविकार जी।
रत्नत्रय गुरु हम पाय तम को हरें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥
रत्नत्रय धर्म सुख हरै सब कर्म जी। रत्नत्रय ज्योति तें मिटे सब भर्म जी।
रत्नत्रय रूप लखि नारि शिव-वर करें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥
रत्नत्रय छत्र ता-सिर फिरें आय जी। जीव सो जगत तजि राज शिवपाय जी।
रत्नत्रय लच्छि की चाह हरि-सुर करें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें॥
रत्नत्रय रवि सम पाप तम नाश है। रत्नत्रय नेत्र तें तत्व परकाश है।
रत्नत्रय मुकुट शिव नारि दूल्हा धरें। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे॥

रत्नत्रय राह को नग्न जावे सही । रत्नत्रय है सदा मोक्ष सुख की मही ।
रत्नत्रय देव-द्रुम सम वृद्धि को धरे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें ॥
रत्नत्रय एक जग माँहि है सार जी । कीजिये कहा—कहों ओर निरधार जी ।
रत्नत्रय नाव भव समुद्र पारे करे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरें ॥
वरत यह रत्नत्रय करे धन्य सोय जी । या थकी फेर नहिं जन्म मृत्यु होय जी ।
वरत यह रत्नत्रय जीव का हित करे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
करो भवि रत्नत्रय वरत मन ल्याय जी । समय यह कठिन ते मिल्यो शुभ आयजी ।
मनुज-तन उच्चकुल माँहि सो ही करे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
वरत की विधि जो भाँति इमि लाय जी । वासत्रय आदि अंत एक टकि खाय जी ।
रीति उत्कृष्ट सो भव्य मन में धरे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
होय नांहि शक्ति उत्कृष्ट तो इमि सुनो । आदि जुग वास एक पारनो दिन गिनो ।
नाँहि मध्य, जीम अंत आदि अनशन करे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
होय तुच्छ शक्ति तोहू करें एम जी । मध्य इकवास इमि पारना जीमजी ।
पारनो एकटकि तुच्छ भोजन करे । मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥

११६

वरत ऐसे करे बरस तेरह सही। तथा त्रय वरस लों ब्रत करे धुनि कही।
अंत उद्यापन वा ब्रत दूनो करे। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
शक्ति सम द्रव्य ते फेर जिन पूजिये। दीजिये दान पर-भावना कीजिये।
और विधि घनी जिन-वाणी लखिके करे। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥
वरत ऐसे करे कर्म अरि को हरे। भव्य के वरत यह भावना उर धरे।
रत्नत्रय वरत की सेव सुर-शिव करे। मैं जजों भाव तें काज वांछित सरे ॥

दोहा:—

रत्नत्रय की सेव करि, रतन-त्रय गुण गाय।
रत्नत्रय की भावना, कर पल-पल शिरनाय ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यग्चारित्रेभ्य: पूर्णार्घं-महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल

रत्नत्रय यह धर्म जगत में सार है।
पूजों भवि मनधार-मोक्ष करतार है ॥

या-पूजा जो करे भव्य हरपाय के।
शिव लक्ष्मी हुलसाय मिले तव आय के ॥

इत्याशीर्वादा

॥ इति रत्नत्रय-मंडल-विधान ॥

नोट— पूजा की समस्त-प्रक्रिया जानने के लिए संशोधक की भूमिका अवश्य पढिये
—संशोधक।

॥ रत्नत्रय व्रत कथा ॥

॥ दोहा ॥

अरह नाथ को वन्दि के, वन्दों सरस्वति पाय।
रत्नत्रय व्रत की कथा, कहूँ सुनो मन लाय ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

जम्बू द्वीप भरत शुभ क्षेत्र। मगध देश सुख सम्पति हेत।
राज गृह तहां नगर वसाय। राजा श्रेणिक राज कराय ॥ २ ॥

१२१

विपुला चल जिन वीर कुँवार । केवल ज्ञान विराजत सार ।
माली आय जनावो दयो । तत्क्षण राजा वन्दन गयो ॥ ३ ॥
पूजा वन्दन कर शुभ सार । लाग्यो पूछन प्रश्न विचार ।
हे स्वामी रत्नत्रय सार । व्रत कहिये जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥
दिव्य ध्वनि भगवान बताय । भादों सुदि द्वादश शुभ भाय ।
कर स्नान स्वच्छ पटश्वेत । पहिनो जिन पूजन के हेत ॥ ५ ॥
आठों द्रव्य लेय शुभ जाय । पूजो जिनवर मन वचकाय ।
जीर्ण न्यूतन जिनके गेह । बिम्ब धरायो तिनमें तेह ॥ ६ ॥
हेम रूप्य पीतल के यंत्र । तांवा यथा भोज के पत्र ।
यन्त्र करो बहु मन थिर देव । रत्नत्रय के गुण लिख लेउ ॥ ७ ॥
निश्शंकादि दर्शन गुण सार । संशय रहित सो ज्ञान अपार ।
अहिंसादि महा ब्रत सार । चारित्र के ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥
ये तीनों ही गुण हैं आदि । इन्हें आदि जेते गुण वाद ।
शिव मारग के साधन हेत । ये गुण धारें ब्रती सुचेत ॥ ९ ॥

भादों माघ चैत में जान। तीनों काल करो भावे आन।
या विधि तेरह वर्ष प्रमाण। भावना भावे गुणहि निधान॥ १० ॥
लवङ्गादिक अष्टोत्तर आन। जपो मंत्र मन कर श्रद्धान।
पुनि उद्यापन विधि जो एह। कलशा चमर छत्र शुभ हेह॥ ११ ॥
संग चतु-विधि को दे आहार। वस्त्रा भरण देउ शुभ सार।
विम्ब प्रतिष्ठा आदि अपार। पूजों श्री जिन हो भव पार॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

इस विधि श्री मुख धर्म सुन, मनोचित्त धर भाय।
कीने फल पायो प्रभु, सो भापो समभाय॥ १३ ॥

॥ चौपाई ॥

जम्बू द्वीप अलंकृत हेर। रहा ताहि लवणों दधि घेर।
मेरु सुदक्षिण दिश हैं सार। है सो विदेह धर्म अवतार॥ १४ ॥
कच्छवती सुदेश तहाँ वसे। वात शोक पुर तामें लसे।
वैस्त्रिव नाम तहाँ का राय। करे राज सुर पति समभाय॥ १५ ॥

वन माली ने जनावो दयो । विपुल बुद्धि प्रभु बन में ठयो ।
इतनी सुन नृप बन्दन गयो । दान बहुत माली को दयो ॥ १६ ॥
हे स्वामी रत्नत्रय धर्म । मोसों कहो मिटे सब भर्म ।
तब स्वामी ने सब विधि कही । जो पहिले सो प्रकाशी सही ॥ १७ ॥
पंचामृत अभिषेक सु ठयो । पूजा प्रभु की कर सुख लयो ।
जागिरनादि ठयो बहु भाय । इस विधि ब्रतकर विस्त्रिव राव ॥ १८ ॥
भाव सहित राजा ब्रत करो । धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो ।
षोडश भावना भावत भरो । अंत समाधि मरण तिन करो ॥ १९ ॥
गोत्र तीर्थंकर बांधो सार । जो त्रिभुवन में पूज्य अपार ।
सर्वार्थ सिद्धि पहुँचा जाय । भयो तहाँ अहमिन्द्र सुभाय ॥ २० ॥
हस्त मात्र तनु ऊँचो भयो । तेतिस सागर आयु सो लयो ।
दिव्य रूप सुख को भंडार । सत्य निरूपण अवधि विचार ॥ २१ ॥
सौधर्मेन्द्र विचारी धरी । यच्छेश्वर को आज्ञा करी ।
वेग देश निर्माप्यो जाय । थापो सुथरा पुर अधिकाय ॥ २२ ॥

कुम्भ नाम राजा तहाँ बसे । देवी प्रजावती तिस लसे ।
श्री आदिक तहाँ देवी आय । गर्भ सोधना कीनो जाय ॥ २३ ॥
रत्न वृष्टि नृप आंगन भई । पंद्रह मास लों बरसत गई ।
सर्वार्थ सिद्धि से सुर आय । प्रजावती सु कुक्ष उपजाय ॥ २४ ॥
मल्लिनाथ सो नाम को पाय । द्वैज चन्द्र सम बढ़त सुभाय ।
जब विवाह मंगल विधि भई । तब प्रभु चित विरागता लई ॥ २५ ॥
दिक्षा धर वन में प्रभु गये । घाति कर्म हन निर्मल ठये ।
केवल ले निर्वाण सो जाय । पूजा करी सुरेसो आय ॥ २६ ॥
यह विधान श्रेणिकने सुनो । व्रत लीने चित अपने गुणो ।
भक्ति विनयकर उत्तम भाय । पहुँचे अपने गृह को आय ॥ २७ ॥
या विधि जो नर नारी करे । सो भवसागर निश्चय तरे ।
नलिन कीर्ति मुनि संस्कृत कही । ब्रह्मज्ञान भाषा निर्मही ॥ २८ ॥

॥ श्री रत्नत्रय कथा भाषा सम्पूर्ण ॥

जाप्य--मन्त्र

त्रयोदशी को :—ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय नमः ।

चतुर्दशी को :—ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्ज्ञानाय नमः ।

पूर्णिमा को :—ॐ ह्रीं त्रयोदश प्रकार सम्यक्चारित्राय नमः ।

नोट:—उपर्युक्त मन्त्रों को शुद्ध उच्चारण करके त्रिकाल १०८ जाप अवश्य करना चाहिये । बिना जाप्य के व्रत की सफलता नहीं हो सकती ।

मण्डल-रचना

पहिले तीन खाने बना लीजिए । एक खाने में आठ बिन्दुएँ रखिए । यह सम्यग्दर्शन का खाना होगा । यहाँ सम्यग्यदर्शन की पूजा कीजिए । दूसरे खानों में भी आठ बिन्दुएँ रखिए । यह सम्यग्ज्ञान का खाना होगा । इसमें सम्यग्ज्ञान की पूजा कीजिये । एवं तीसरे खाने में तेरह बिन्दुमात्राएँ रखिये । यह सम्यक्चारित्र का खाना होगा । यहाँ सम्यक्चारित्र की पूजा कीजिए ।

१२६

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१६	६	पुरय	पुण्य	४०	८	प्रवाहि	प्रवादि
१६	१३	ॐ	ॐ ह्रीं	४२	३	घट	यह
२०	३	सश्यग्दर्शनाय	सम्यग्दर्शनाय	४३	६	पच	पंच
२१	७	धन	धुनि	४७	५	वास्हा	स्वाहा
२८	३	अग्रि	अग्नि	५०	१५	स्वर	खर
२८	७	अग्नि	अग्नि	५०	१५	थूथू	घूघू
२८	१३	पजे	पूजे	५४	१३	अनुगामी	अननुगामी
२९	१५	सम्यग्दर्शताय	सम्यग्दर्शनाय	५४	१५	अनुगामी	अननुगामी
२९	१५	निर्वत्तागीति	निर्वपामीति	५५	१०	अननुगामी	अवस्थित
३०	३	दोप	दीप	५६	५	पर्यय	पर्ययज्ञानाय
३१	२	पाप	पाप	६९	१३	अमिलाखे	अभिलाखे
३२	७	पर्णार्घं	पूर्णार्घं	७५	११	अवकोंलन	अवलोकन
३७	११	श्रत	श्रुत	८२	१३	रहत	रहित

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्ध
९७	६	डकनी	टकनी	११०	३	प्राद	पाद
९९	९	पह	यह	११०	१३	रहितषणा	रहितराषणा
१०२	८	जातुपरिच्यति क्रम	जानूपरिव्यतिक्रम	११२	५	रध	राध
१०९	७	मेर	मेरे				

पृष्ठ ५५ में १ अर्घ छपने से रह गया है जो नीचे दरज किया जाता है ६४ वें अर्घ के वाद यह अर्घ वढ़ा लेना चाहिए और क्रम में अर्घों के नम्वरों की दुरुस्ती कर लेनी चाहिए।

ज्ञान अवधि जवते उर उपजे हानि वृद्धि हो जाई।
अंस वधै अरु घटै निरंतर एक रूप नहिं गाई ॥
अनवस्थित यह अवधि ज्ञान है जिन वाणी इमिगावे।
ताते मैं यह ज्ञान जजत हों भव दधि पार लगावै ॥

ॐ ह्रीं अनवस्थित अवधि-ज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६५ ॥

मुद्रकः—
कपूरचन्द जैन, महावीर प्रेस आगरा।